प्रथम अध्याय

हिन्दी का महिला नाटक : एक सर्वेक्षण

साहित्य समाज के प्रांगण में फलित हो रही प्रत्येक थडकन का प्रतिबिंब है। प्रत्येक राज्य और समाज की भौतिक विकास यात्रा की गाथा तो आँकडों में संरक्षित रहती है लेकिन इस विकास संघर्ष की पृष्ठभूमि में जो चेतना प्रवाहमान होती है, उसका निरपेक्ष मूल्यांकन साहित्य से ही प्राप्त हो सकता है। साहित्य मनुष्य के ज्ञानाधार और प्रबुद्ध चिंतन प्रवाह की सबसे बडी उपलब्धी मानी जाती है। साहित्य में मेधा शक्ति से ज्यादा हृदय पक्ष पर अधिक बल देते है और यह मानव की बुनियादी ज़रूरतें आनंद और मनोरंजन पर ज्यादा ज़ोर देती है। साहित्य के ज्यादात्तर विधाओं में नाटक एक ऐसा माध्यम है जो ज़िन्दगी के ज्यादा निकट है। वस्तुतः नाटक में एक ही समय में विभिन्न रुचियों तथा भिन्न लोगों को प्रसन्न करने की शक्ति विद्यमान रहती है। नाटक अत्यंत प्राचीन साहित्यक विधा है जो दृश्य काव्य के अंतर्गत आती है। नाटक को पंचम वेद माना गया है। नाट्यशास्त्र के अनुसार इस पंचम वेद की रचना ब्रह्मा ने अन्य वेदों से सामग्री लेकर की है। ऋग्वेद से संवाद, सामवेद से गान, यदुर्वेद से अभिनय और अथर्ववेद से रस लेकर नाट्यवेद की रचना हुई। भरत मुनी ने नाट्य शास्त्र को पंचम वेद की संज्ञा दी। भरत मुनी के अनुसार नाट्य में कहीं धर्म है तो कहीं खेल, कहीं अर्थ शास्त्र है तो कहीं खेल, कहीं अर्थशास्त्र है तो कहीं शांति, कहीं हास्य है तो कहीं युद्ध। नाटक केवल एक साहित्यक विधा न हो कर रंगमंचीय प्रतिमान से युक्त एक मनोरंजन का साधन भी है। "वस्तुतः नाटक में एक ही समय में विभिन्न रुचियों तथा भिन्न वर्गों के लोगों को प्रसन्न करने की शक्ति विद्यमान रहती है। नाटक साहित्यक अभिव्यक्ति की ऐसी विधा है जो केवल साहित्य नहीं उससे अधिक कुछ और भी है। नाटक मूलतः सामाजिक स्थितियों की अनुकृति है। नाटक दृश्य एवं श्रव्य काव्य है। प्रत्येक नाटक अपने युग का सत्य दिगदर्शित करता है। किसी न किसी अनुभव को प्रकट करता है यही उसका मौलिक गुण है।"[1]

---

[1] स्वातंत्र्योत्तर साहित्य का इतिहास - डॉ. बप्पुराम देसाई, पृ.47

आज नाटक सामाजिक संवेदना को उजागर करके जीवन की जीवंत समस्याओं का स्पष्ट आविष्कार का साधन रह गया है। मतलब यह है कि लोक जागरण और लोककल्याण की भावना की ओर नाटककार ज्यादा झुके हुए है।

1.1 नाटक: अर्थ एवं परिभाषा

नाटक का अर्थ निश्चित होता है लेकिन परिवेश का बदलाव नाटक की संरचना में बदलाव लाता है। नाटक के उद्‌भव और विकास की कथा को पंडित सीताराम चतुर्वेदी ने, नाट्यशास्त्र, अभिनय दर्पण, दशरूपक भाव प्रकाशन आदि के आधार पर प्रस्तुत करते हुए लिखा है- "नाटक ऐसा खेल है, देखा, सुना जा सके, पढने की वस्तु नहीं है।"[2]

भारतीय नाट्यशास्त्र में नाटक शब्द की उत्पत्ति 'नट' धातु से मानी जाती है। 'नट' शब्द का अर्थ है 'अभिनय'। जो अभिनेता से जुडा हुआ है। दशरूपकम में धनंजय ने नट धातु से नाटक की व्युत्पत्ति मानी है। डॉ. दशरथ ओझा के मतानुसार "नट धातु का अर्थ गात्र विक्षेपण एवं अभिनय दोनों ही था। कालांतर में नृत धातु का प्रयोग गात्र विक्षेपण के अर्थ में होने लगा और नट्, का प्रयोग अभिनय के अर्थ में होने लगा।"[3]

आखिर यह कह सकते है कि नट् धातु के अर्थ में विद्धानों में मतांतर है फिर भी नाटक की उत्पत्ति अधिकांश विद्धानों ने नट् धातु से ही मानी है। नाटक के विषय में भारतीय और पाश्चात्य विचारकों द्वारा अपनी अपनी अनेक परिभाषायें दी है।

---

[2] नाटक और रंगमंच - संपादक डॉ. शिवरामसाली- डॉ. सुधाकर गोकाकर, पृ.5

[3] हिन्दी नाटक और नाटककार - डॉ. सुरेश चन्द्र शुक्ल, कु. नीलम मसंद-विषय प्रवेश

सभी, शास्त्रों और शिल्पों में दर्शन के सम्मिलित रूप को ही नाटक कहते है। भाषा के माध्यम से उल्लास, आह्लाद, दुःख जैसे भावनाओं को प्रकट करना नाटक का परम लक्ष्य है। इसलिए ही नाटक स्वान्त सुखाय न बनकर लोककल्याण और परसुखाय का साधन बन जाता है। दर्शक क्षण भर के लिए ही सही अपनी अस्मिता को भूलकर नाटक में लीन हो जाते है जो नाटक के संदर्भ में स्वाभाविक है। इस सत्य की परिभाषा को सफल और सठीक बनाने की कोशिश भारतीय और पाश्चात्य विचारकों द्वारा हुई है।

1.1.1 भारतीय चिन्तकों के मत

भारतीय चिंतकों से भिन्न मत प्राप्त है। वे यों है- भरतमुनि के अनुसार- नाट्य शास्त्र के प्रणेता भरतमुनि नाटक की परिभाषायें देता है- "यस्मात्स्वंभावं संहृय गाड गोपाड़- गगतिक्यै? अभिनीयते गम्यते च तस्मा द्वै नाटकं स्मृतम्।"[4] अर्थात, सब अंगों उपांगों और गतियों को, क्रम से व्यवस्थित करके उसका अभिनय किया जाता है। और दर्शकों तक पहुँचाया जाता है।

आचार्य विश्वनाथ-"नाटक वह रचना है जिसकी कथावस्तु इतिहास प्रसिद्ध हो जिसका नायक उच्च वंश में उत्पन्न धीर-वीर और प्रतापी हो जिसमें अनेक प्रकार के ऐश्वर्यों का वर्णन हो, अंकों की संख्या पाँच से दस तक हो, श्रंगार अथवा वीर-जिसमें अंगीरस हो, शोक रस अंगीभूत हों संधियों का यथोचित सन्निवेश आदि हो।"[5]

---

[4] भारतेंन्दु की नाट्य कला - प्रेम नारायण शुक्ल, पृ.18

[5] साहित्य दर्पण - आ. विश्वनाथ, छठा परिच्छेद

महिम भट्ट के अनुसार- "जब काव्य को गीतादि से रंजित कर नटों द्वारा उसका प्रदर्शन किया जाता है तो उसे नाटक कहते है।"[6] बाबू गुलाब राय- "नाटक का संबंध नट से है। अवस्थाओं की अनुकृति को नाटक कहते है। इसी से नाटक शब्द की अभिव्यक्ति है।"[7]

जयशंकर प्रसाद- "काव्य एक कला है और ललित कलाओं में सुकुमार कला है...नाटक का कला से संबंध नहीं अपितु वह कला का विकसित रूप है। हृदय को अनुभूति कराने के लिए दो द्वार है- कान और आँख। इधर काव्य की अनुभूति भी दृश्य और श्रव्य दोनों प्रकार से होती है।"[8]

नेमीचन्द्र जैन नाटक के बारे में लिखता है कि-"अपनी मूल प्रवृत्ति की दृष्टि से नाटक वह संवाद मूलक कथा है जिसे अभिनेता रंगमंच पर नाट्यव्यापार के रूप में दर्शक वर्ग के सामने प्रस्तुत करते है।"[9]

1.1.2 पाश्चात्य विद्वानों की राय में...

पाश्चात्य विद्वानों की परिभाषाओं में भी एकता नहीं है। अरस्तु ने नाटक को ट्राजडी के रूप में स्वीकार किया और उसे जीवन के व्यापारों का अनुकरण माना है। "A tragedy, then, is the imitation of an action, that is serious and also as having magnitude complete in itself in language with pleasurable accessories

---

6 व्यक्ति विवेक - महिम भट्ट, पृ.381

7 हिन्दी नाट्य विमर्श - गुलाब राय, पृ.6

8 हिन्दी साहित्य सम्मेलन - जयशंकर प्रसाद, कानपुर, कार्य विवरण, भाग दो, पृ.106

9 हिन्दी नाटक में समसामयिक परिवेश - डॉ. विपिन गुप्त, पृ.37

each kind brought in separately in the parts of the work, in drammatic not in a narrative from with incidents arousing pity and fear where with to accomplish it catharasis of such emotions."[10]

यहाँ ट्राजडी जीवन व्यापारों का अनुकरण कहा गया है। ट्राजडी में कलात्मक तथा आलंकारिक भाषा विषमतायें, वर्णनात्मक शैली के स्थान पर दृश्यात्मक शैली होती है।

अभिनेयता, संवादात्मकता और मनुष्य के क्रियाकलापों को महत्वपूर्ण ठहराकर निकेल ने नाटक की परिभाषा यों दिया है। "Drama is the art of expressing ideas about life in such a manner as to render to that expression capable to interpretation by actors and witness the action."[11] अर्थात, नाटक जीवन संबंधी विचारधाराओं को प्रस्तुत करने की ऐसी कला है जिसमें अभिनेताओं के भाषणों और क्रियाकलापों द्वारा वह प्रस्तुति अत्यधिक शक्तिशाली बनकर दर्शकों को आनंदित करती है।

अकिर की राय में -"Drama is the presentation of will of man in unflict with the misterious powers of natural forces which limit and be little (It is one of as on the stage there to struggle against fatality, against social law, against one of fellow mortals, against himself if need be, against the amibitions, in the interest, the prejudices the folly the melevolance of those around him.)"[12]

अर्थात, मनुष्य की आकांक्षाओं का प्रतिफलन नाटक में प्राप्त है। जीवन को वृत्त प्रदान करनेवाली आकांक्षायें वही है। जिनमें हमारा जीवन रंगमंच पर कष्टों के

---

[10] Play marking - William Archer, p.23

[11] Quoted in Drama, from Ibson to Eliot - Raymond Williams, p.18

[12] Theory of Drama - Allar Dyce Nicoll, p.35

विरुद्ध, सामाजिक मान्यताओं के विरुद्ध मित्रों अथवा आकांक्षाओं से संघर्ष करने के लिए अवतारित हुआ है।

ऐसे भारतीय और पाश्चात्य विचारकों के मतों को देखते समय नाटक मानव जीवन में गहरा परिवर्तन लाने में सक्षम दिखाई देता है क्योंकि यही एकमात्र विधा है जो मानव-हृदय को गहरे रूप में प्रभावित करती है।

1.2 नाटक का स्वरूप

नाटक एक भाषिक कला है। साहित्य के संप्रेषण में चरित्र के प्रदर्शन में समूचे चरित्र पर ध्यान देते है। नाटक के स्वरूप के संबंध में नाटककार-अभिनेता और दर्शक गण इन तीनों को महत्व देना आवश्यक है। 'दृश्य होता है जो काव्य'- वही नाटक है। डॉ. चातक ने सही लिखा है- "किसी भी नाट्यकृति के तीन संरचनात्मक स्तर होते है। एक स्तर उसकी साहित्य अवधारणा से संबंद्ध होता है, दूसरा भाषा से तीसरा रंगानुभूति से। ये तीनों स्तर एक दूसरे से भिन्न न होकर परस्पर संश्लिष्ट होते है। जिसके कारण कोई भी नाट्यकृति अपनी पूर्णता में एक कलावस्तु के रूप में रूपायित होती है।"[13] इस प्रकार नाटक का स्वरूप तीन स्तरीय और जटिल है और अन्यविधाओं की अपेक्षा अनूढे रूप संश्लिष्ट है। दृश्यकाव्य और श्रव्यकाव्य का ऐसा मणिकांचन संयोग नाटक के स्वरूप को अलौकिक गरिमा से संपन्न बनाता है। नाटक का एक अतिरिक्त, अनिवार्य और विशिष्ट गुण दृश्यव, मानव मन को आह्लादित करते हुए प्रभावोत्पादन-प्रक्रिया में उपादान की भूमिका अदा करता है।

---

[13] आधुनिक हिन्दी नाटक: भाषीक और संवादीय संरचना - डॉ. गोविन्द चातक, पृ.39-40

1.3 नाटक के तत्व

नाटक के तत्वों को लेकर भारतीय और पाश्चात्य विचारकों में थोडा मतभेद है। कई विचारक एक तत्व में दो या तीन तत्वों को सम्मिलित करके देखते है तो कई इन्हीं तत्वों को अलग-अलग करके देखते है। विचारकों के मत को ध्यान में रखकर, निम्नलिखित तत्वों को नाटक के प्रमुख आवश्यक अभिकरण कहा जा सकता है।

1.3.1 कथावस्तु

सबसे प्रमुख और अभिन्न तत्व के रूप में कथावस्तु को माना जाता है। अरस्तु नाटक की कथावस्तु को सबसे औन्नत्य में मानता है और उसे विशेष महत्व देते है। उनकी राय में नाटक को वास्तविक स्वरूप प्रदान करनेवाला सत्य ही कथावस्तु है। यही नाटक का प्राण तत्व है। यह जहाँ एक और नाटककार की कुशल रंगदृष्टि की कसौटी है, वहीं दूसरी ओर वह नाटक का केन्द्रबिन्दु है जहाँ, नाटक के सभी तत्व, सभी कलाऐं ऊर्जा ग्रहण कर सार्थक बनती है। नाटक में रंगमंच की सारी योजनायें कथावस्तु में ही नियोजित होती है। कथानक में कम घटनायें तथा संक्षिप्तता का गुण होना चाहिए। इन सब के अलावा नवीनता, मौलिकता, सरलता, विश्वसनीयता आदि भी कथानक के प्रमुख आवश्यक गुण माने जाते है।

1.3.2 पात्र व चरित्र चित्रण

पात्र व चरित्र चित्रण नाटक के प्रमुख तत्वों में एक है। दर्शक की भावनायें उन प्रमुख केन्द्रीय पात्रों पर केन्द्रित होती है जो कार्यव्यापर को आगे बढाने में मुख्य भूमिका निभाती है। वही प्रमुख पात्र नाटक के चरित्र है जो चरित्रों को जीवन्त तथा प्रभावशाली बनाकर एक सच्चे नाटककार का निर्माण करते है। उपर्युक्त पात्रों के चयन के द्वारा नाटक प्रभावी बना सकते है। स्वाभाविकता, सहजता, सरलता आदि

गुणों के साथ पात्रों का चयन युगानुरूप होना चाहिए। नाटक के अंतर्गत, नायक, नायिका आद्यंत और गौण पात्र कथा के बीच-बीच कथावस्तु को गति देते है। नायक व नायिका आरंभ से लेकर अंत तक नाटक के केन्द्र में रहते है। एक तरह से कहे तो पात्रों व उनके चरित्र-चित्रण संबंधी नियमों का पालन करना भी आवश्यक होता है।

1.3.3 कथोपकथन

संपूर्ण नाटक कथोपकथन अथवा वार्तालाप के साँचे पर टिका होता है। एक नाटक की पूर्णता कथोपकथन या संवाद के जोश पर आधारित है। संवादों से ही नाटक आगे बढता है। संवादों की व्यवस्था ही दर्शकों अथवा पाठकों को अपनी ओर आकर्षित करती है। नाटक की संवादयोजना कालानुसार परिवर्तित होती रहती है। संवादों की व्यवस्था सीधी-सरल भाषा में हो, जो कि दर्शक पाठक, श्रोता सरलता से समझ जाये। रोचकता, नाटकीयता, रहस्यात्मकता, संवेदना, परिवेश की पूर्णता आदि गुण भी कथोपकथन में होना ज़रूरी है। इसके साथ साथ संवाद कथानक को भी गतिशीलता प्रदान करनेवाले होनी चाहिए।

1.3.4 वातावरण

वातावरण को देशकाल, माहौल या पर्यावरण भी कहा जा सकता है। अपने समय को प्रस्तुत करने में नाटककार को सजग रहना चाहिए। नाटककार को ध्यान रखना चाहिए कि वो किस प्रकार के नाटक की रचना करने जा रहा है। अर्थात् ऐतिहासिक, सामाजिक, राजीनीतिक, धार्मिक आदि नाटकों में वातावरण अलग-अलग होता है। एक उत्तम वातावरण के निर्माण में बाहरी और मानसिक परिवेश

का मिलावट ज़रूरी है। नाटक को दृढता प्रदान करनेवाले तत्व में वातावरण का विशेष महत्व है। यह भी कहा जा सकता है कि नाटक की सफलता इसी तत्व पर निर्भर करती है।

1.3.5 भाषा

साहित्य की अन्य विधाओं की भाषा नाटक की भाषा से बहुत भिन्न होती है। नाटक की भाषा मंच की भाषा होती है। दर्शकों व पाठकों को एकसाथ संतृप्त कराने की क्षमता नाट्यभाषा में होनी चाहिए। युगानुरूप भाषा परिवर्तित होती रहती है। यथा-पहले संस्कृत नाटक अधिक देखे जाते थे, आज खडी बोली ने उस भाषा का स्थान ले लिया है। नाटकों की भाषा सरल, सहज व सारगर्भित होना चाहिए। नाटक में आकर्षण पैदा करनेवाली भाषा ही उसे पहचान प्रदान करती है। भाषा विषय-वस्तु के अनुसार होना चाहिए। इससे स्पष्ट है कि भाषा पात्रों के अनुकूल, सरल, सहज परिवेश के अनुसार होनी चाहिए। पात्रों की वेशभूषा क्षेत्र विशेष का ध्यान रखना भी भाषा के आवश्यक होता है।

1.3.6 रंगमंचीयता

नाटक और रंगमंच साधन साध्य है नाटक की पूर्णता रंगमंचीयता से ही होती है। क्योंकि नाटक रंगमंच के लिए ही लिखा जाता है। रंगमंच नाटक की वास्तविक कसौटी होती है। जिस नाटक का मंचन किया जाता है वही सफल नाटक की कोटि में आता है। जो नाटक काफी लंबे होते है, जिनका मंचन करना कठिन होता है। आज उनके कथानक को सरल बनाकर उनका मंचन भी किया जा रहा है। नाटक

जैसे विधा को अधिक आकर्षक, सशक्त, लोकप्रिय बनाने में रंगमंचीयता की भूमिका महत्वपूर्ण होती है।

1.3.7 उद्देश्य

कोई भी कृति बिना किसी उद्देश्य के नहीं लिखी जाती। नाटकों का मुख्य उद्देश्य भी नाटककार पहले से ही निर्धारित करके रखता है। आरंभ से ही साहित्यकारों का उद्देश्य जन-कल्याण की ही रही है। बिना किसी उद्देश्य के कृति का निर्माण करना ही व्यर्थ है। सोद्देश्यपूर्ण कृति ही सफल, लोकप्रिय, प्रभावशाली व उत्तम मानी जाती है। इस प्रकार 'उद्देश्य' भी नाटक के तत्वों में अपना महत्वपूर्ण स्थान निर्धारित करती है।

1.4 हिन्दी नाटक ऐतिहासिक परिदृश्य

हिन्दी नाटक साहित्य का ऐतिहासिक विवेचन अपने आप में कठिन कार्य है। एक ओर यह विशाल एवं व्यापक है तो दूसरी और हिन्दी नाटक के प्रारंभ कालीन स्थितियों का विवरण बहुत कम है। हिन्दी नाटक के आरंभकालीन कृतियाँ एवं उनकी प्रस्तुति के संबंध में विद्वानों में भी मतभेद है। अतः हिन्दी नाटक साहित्य की केवल एक ऐतिहासिक रूपरेखा प्रस्तुत करना ही उनका उद्देश्य है। पूर्व भारतेन्दु युग, भारतेन्दु युग, प्रसादयुग तथा समसामयिक युग जैसे चार सोपानों में नाटक परंपरा का अध्ययन ही उनका उद्देश्य है।

1.4.1 पूर्व भारतेन्दु युग

भारतीय नाटक साहित्य हज़ारों वर्ष पुरानी परंपरा है। सामान्यतय यही बताया जाता है कि भारतीय नाटक के प्रारंभिक रूप संस्कृत नाट्य परंपरा से विकसित हुआ है। ऋग्वेद, रामायण, महाभारत जैसे विविध ग्रन्थों में नाट्य संबंधी

विविध सूचनायें मिलती भी है। भारतीय परंपरा के अनुसार बताया जाता है कि त्रेतायुग के प्रारंभ में देवताओं ने ब्रह्मा से मनोरंजन के एक साधन का निर्माण करने की प्रार्थना की तो ब्रह्मा ने ऋग्वेद से पाठ्य, सामवेद से संगीत, यजुर्वेद से अभिनय और अथर्ववेद से रस लेकर नाट्य वेद की रचना की। बाद में भरतमुनि ने अपने सौ पुत्रों के साथ नाट्य की सफलतम प्रयोग भी किये। यह तो निसंदेह कहा जा सकता है कि एक परमविकसित नाट्य परंपरा अचानक जन्म नहीं लेते बल्कि पूर्व के किसी अविकसित व अपरिष्कृत नाट्य रूप से विकसित होकर ही संपन्नता के शिखर पर पहुँची है। डॉ. इंदुजा अवस्थी की राय में- "संस्कृत की सुविकसित नाट्य-परंपरा के पहले भी कोई नाट्य परंपरा होगी, जो एक और तो संस्कारित (अथवा संस्कृत) होकर महान नाटकों के रूप में प्रतिफलित हुई है।"[14] ऐसी खोज हमारे पंडितों को लोकनाट्य रूपों के उस पार तक खडे कर दिये। अतः हमें निसंदेह कहना पडेगा कि संस्कृत नाटकों की उत्पत्ति लोक मनोरंजनात्मक व अनुष्ठानपरक परंपराशील नाट्यों से ही हुई है। यह तर्कविहीन बात है कि नाटक के विकास में कुशीलव कथागायन परंपरा, यात्रा और शोभायात्रायें, चारण परंपरा, स्वांग, रास आदि परंपराओं का सर्वोपरि ऐतिहासिक महत्व है।

1.4.1.1 जननाटक

जननाटक लोक मनोरंजनात्मक नाट्य के रूप में जाना जाता है। यह भारत के मूलवासियों के असंस्कृत नृत्य, गीत, कथा और अभिनय के समन्वित रूप है। साहित्यक नाटकों के शताब्दियों पूर्व ही जन नाटक देश भर में प्रचलित थे। बंगला में यात्रा एवं कीर्तीनया, बिहार में बिदेसिया, अवधी पूर्वी हिन्दी ब्रज में रास, स्वांग,

[14] रामलीला परंपरा और शैलियाँ - डॉ. इंदुजा अवस्थी, पृ.15

गुजरात में भवाई, महाराष्ट में तमाशा, केरल में पोराट्टुकली, काक्कारशी नाटकम, तमिलनाटु में तेरुकूतु, कामन केट्टु, आन्ध्रा में वीथि भागवत, वालकम आदि बहुत से नाट्य रूपों को उन नाटकों के अन्तर्गत अध्ययन कर सकते है।

1.4.1.2 कुशीलव का कथा गायन परंपरा

पुराण और देवाख्यानों की परंपरा अतिप्राचीन काल से ही देश में प्रचलित थी। रामायण, महाभारत आदि कथा गायन के साथ-साथ नृत्य और अभिनय भी इसकी विशेषता थी। यह आख्यान परंपरा कुशीलव के साथ जोड सकते है। कुशीलव शब्द की उत्पत्ति रामायण के कुश और लव से ही मानी जाती है। कुशीलव राज दरबारों में ही नहीं बल्कि ग्रामीण जन विभाग के बीच में भी, धार्मिक एवं सांस्कृतिक कथाओं के गायन छोटे-मोटे संवाद और अभिनय के साथ करते-रहते थे।

1.4.1.3 यात्रा और शोभायात्रायें

यात्रा और शोभायात्राओं की परंपरा भी अतिप्राचीन है। यह एक नृत्त-नृत्य रूप है। यात्रा रूप के संबंध में डॉ. दशरथ ओझा का अभिमत है कि-"यात्रा नाटक मानव इतिहास के उस युग में प्रचलित हुआ होगा, जब संसार की विभिन्न जातियाँ प्रारंभ में अपने उपास्य देव की प्रतिमाएँ जुलूस के रूप में निकालकर नृत्य और संगीत के साथ अभिनय किया करती थी।"[15] राज्यारोहण, युद्धविजय, सांस्कृतिक और धार्मिक पर्वों पर शोभायात्रायें निकालने की परंपरा प्राचीन युग में भी प्रचलित रही है।

---

[15] हिन्दी नाटक उद्‌भव और विकास - डॉ. दशरथ ओझा, पृ.40

1.4.1.4 चारण परंपरा

मनुष्य के सांस्कृतिक उत्थान में चारण परंपरा का अपना वैभव एवं ऐतिहासिक महत्व है। प्राचीन काल में प्रचलित कुशीलव का कथागायन परंपरा मध्ययुग में चारण कला के रूप में विकसित हुए। इस संबंध में डॉ. इंदुजा अवस्थी का अभिमत है कि-"प्राचीन काल में प्रचलित कथा गायन परंपरा का मध्ययुग में बहुत विकास हुआ। दसवीं शताब्दी तक नाट्यकथाकारों का एक निश्चित वर्ग-चारण उत्पन्न हो चुके थे। ये चारण प्राचीन कुशीलवों की परंपरा में माना जा सकते है।"[16] प्रत्येक राज दरबार के चारण विभाग अपने-अपने राजाओं की वीरगाथायें अमानुषिक ढंग से अपने गायन द्वारा करते थे। बाद में चारण द्वारा कथागायन की रीती लोक समाज में भी उतर आई।

1.4.1.5 स्वांग

पौराणिक, राजनैतिक और सामाजिक विषयों को लेकर नृत्य संगीत एवं अभिनय से समन्वित प्रमुख नाट्य रूप है स्वांग। स्वांग की लोकप्रियता के बारे में कबीरदास, मालिक मुहम्मद जायसी आदि ने बहुत पहले ही जिक्र किया था।

"कथा होय तहाँ स्रोता सोवैं, वक्ता मूंड पचाया रे।
होय जहाँ कहीं स्वांग तमाशा, तनिक न नींद सताया रें।"[17]

इसमें स्पष्ट हो जाता है कि चाहे पुरुष हो या स्त्री हो बच्चे हो या बूढे समाज के सभी वर्ग इन प्रदर्शनों से बहुत अधिक प्रभावित होते थे।

---

[16] रामलीला परंपरा और शैलियाँ - डॉ. इंदुजा अवस्थी, पृ.24-25

[17] कबीर ग्रंथावली - अयोध्या सिंह उपाध्याय, पृ.216

1.4.1.6 रास

समाज के साधारण जनता की रुचि और योग्यता को ध्यान में रखकर निर्मित एक जन नाट्य शैली है रास। रास पूर्णतया विकसित नाटकों के प्रारंभिक काल का रूप है। रास की अबसे बडी विशेषता यह है कि संपूर्ण नाटक छन्दोबद्ध एवं गेय होता था, गद्यांश सर्वथा उपेक्षित रहता था। रास नाटकों में नृत्य को प्रमुख स्थान दिया जाता था। इस प्रकार चौदहवीं शताब्दी तक देशी भाषाओं में पारंपरिक रंगमंच विकसित होने लगा था।

1.4.1.7 संस्कृत नाट्य परंपरा

संस्कृत नाटक समाज के परिष्कृत जन विभाग की मनोरंजनोपाधी थी। ये साधारण जन विभाग की बुद्धि और योग्यता के बदले शास्त्रधर्मी अधिक थी। संस्कृत नाटकों का आयोजन राज महल में या किसी मंदिर के प्रांगण में ही होता था। संस्कृत नाटकों में गद्य-पद्य आदि का प्रयोग नियमानुसार होता था। भवभूति कालिदास, कृष्णमित्र, शूद्रक, टर्क, भट्टनारायण आदि प्रसिद्ध नाटककार संस्कृत में ही हुए है। महाकवि कालिदास का नाम संस्कृत नाट्यपरंपरा में प्रमुख है। 'अभिज्ञान शाकुंतलम','विक्रमोर्वशीयम', तथा 'मालविकाग्निमित्रम' इनकी प्रमुख रचनायें है। इनके बाद शूद्रक का नाम आता है जिन्होंने 'मृच्छकटिकम' से अपनी ख्याति प्राप्त की।

1.4.1.8 लोकनाटक

विदेशी आक्रमणों व उनसे उत्पन्न अशान्त परिस्थितियों में ह्रासोन्मुख नाट्य कला को जीवंत बनाने में लोकनाटकों की भूमिका रही है। लोकजीवन में लोक

नाटकों के रूप में नाट्य-परंपरा जीवित रही। बादलों का उमडना, बरसात की रिमझिम, लहतहाती, फसलें, बल-कल, बहते झरने, बसन्त, हेमन्त आदि प्रकृति का अक्षयलोक जितना मुक्त है उतना ही मुक्त नाट्य-लोकनाट्य। लोकनाट्य मानव-संभ्यता और संस्कारों के समांतर ही प्रवाहमान है। "बंगाल में जात्रा, बिहारी में बिदेसिया, अवधी पूर्वी हिन्दी-बाण तथा खडी बोली में राम, स्वांग नौटंकी, भांड आदि परंपरा में ही डाक्टर दशरथ ओझा हिन्दी नाटक की परंपरा का मूल स्रोत भी जननाटकों से ही स्वीकार करते है।"[18] लोक नाटक की अपनी विशेषता है कि वह अपनी प्रस्तुति हेतु किसी विशिष्ट रंगमंच की अपेक्षा नहीं रखता।

1.4.1.9 हिन्दी के प्रारंभिक नाटक

पन्द्रहवी शताब्दी में देश में एक धार्मिक आन्दोलन शुरू हुआ। वैषणव धर्म के प्रचार प्रसार के कारण संस्कृत अध्ययनाध्यापन भी चल पडे। उस समय कतिपय विद्वानों ने जनरुचि के अनुकूल कथानक, भाषा तथा शैली का ध्यान रखकर नाटक रचने लगे। संस्कृत नाटकों से प्रभावित होने पर भी उन नाट्यकारों ने रास शैली पर छन्दोपद्ध नाटकों की रचना ही की। भगवान भक्ति ही इन नाटकों का प्रमुख उद्देश्य रहा। इनमें हृदयराम कृत 'हनुमन्नाटक', बनारसी दास कृत 'चैतन्य चद्रोदय', कवि सामराज कृत 'श्रीदामा चरित', कवि भूदेव शुक्ल कृत 'धर्म विजय' आदि प्रमुख है।

1.4.1.10 हिन्दी नाटक परंपरा

हिन्दी नाटक परंपरा में प्रमुख है- भारतेन्दु पूर्वयुग, भारतेन्दु युग, प्रसादयुग, प्रसादोत्तर युग। प्रसादोत्तर युग में स्वातंत्रतापूर्व हिन्दी नाटक परंपरा तथा स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी नाटक परंपरा।

---

[18] हिन्दी नाटक उद्‌भव और विकास - डॉ. दशरथ ओझा, पृ.42

1.4.1.11 भारतेन्दु पूर्व नाटक

भारतेन्दु पूर्व युग में प्राणचन्द्र चौहान, उदयकवि, विश्वनाथ सिंह, रघुराय-नागर आदि प्रमुख है। इस युग में मौलिक तथा अनूदित नाटक दोनों मिलते है। भारतेन्दु पुर्व नाटक परंपरा पर विद्धानों के बीच व्यापक मतभेद रहा है। डॉ. नगेन्द्र के अनुसार- "भारतेन्दु के पूर्व जिन नाट्यकृतियों- प्राणचन्द्र चौहान कृत 'रामायण महानाटक' (1610), लछिराम कृति 'करुणा भरण' (1657), नवाज़ कृत 'शकुन्तला' (1680), महाराज विश्वनाथ सिंह कृत 'आनंदरघुनंदन' (अनुमानतः (1700 ई), रघुराय नागर कृत 'सभासार' (1700), उदय-कृत 'रामकरुणाकर' एवं 'हनुमान नाटक' (1840) का उल्लेख मिलता है, वे वस्तुतः नाटक नहीं है। ये पद्यात्मक प्रबंध है।"[19] ये सब व्रजभाषा में रचित थे और यह व्रजभाषा नाटक संस्कृत नाट्य-प्रणाली की छाया में ही लिखे गए है क्योंकि इनके कथानकों का आधार धार्मिक, पौराणिक, आख्यान ही है। डॉ. वीरेन्द्र कुमार शुक्ल की राय में- "पूर्व भारतेन्दु काल से भारतेन्दु युग तक नाटककारों की प्रवृत्ति संस्कृत नाट्य साहित्य तथा पौराणिक आख्यानों को भाषांतर रूप देकर हिन्दी-नाट्य-साहित्य की परंपरा का आविर्भाव करना रहा है। ... नाटककारों की मूल प्रवृत्ति-अनुवादों की ओर थी।"[20] पूर्व भारतेन्दु युग के नाटकों को भारतीय नाट्य परंपरा में प्रमुख स्थान देने में भी मतभेद रहा था।

---

[19] हिन्दी साहित्य का इतिहास - डॉ. नगेन्द्र, पृ.468

[20] भारतीय नाट्य साहित्य - सं. डॉ. नगेन्द्र, पृ.261-62

1.4.2 भारतेन्दु युग

अन्य विधाओं के समान हिन्दी में नाटक का सूत्रपात भी भारतेन्दु हरिश्चन्द्र से माना जाता है। राष्ट्रीय चेतना एवं सांस्कृतिक उत्थान का युग था। राष्ट्रीय जागरण के युग में नाटक प्रचार के लिए बहुत उपयोगी प्रमाणित हुआ। तत्कालिन राजनीतिक और सामाजिक परिस्थितियों के अनुकूल सृजन प्राप्त नाटक केवल मंचित होने के लिए लिखा जाता था। भारतीय और पाश्चात्य नाट्य कला का एक सम्मिश्रण तत्कालीन नाट्य कला में पाया जाता है। प्रदर्शन एकमात्र लक्ष्य होने के कारण नाटक रंग संस्कारों से संपन्न थे। भारतेन्दु के प्रमुख नाटक 'भारतदुर्दशा', 'अंधेर नगरी', 'भारत जननी', 'कर्पूर मंजरी', 'धनंजय विजय', 'नीलदेवी', 'चंद्रावली', 'विषमस्य विषमौषधम' आदि नवोत्थान व नवजागरण की किरणों के साथ भारतेन्दु युग का उदय हुआ। जिस प्रकार की चेतना से लैस नाटक आज हमारे बीच मौजूद है, उनके लिए ज़मीन तैयार हो रही थी, भारतेन्दु युग में, कहना अतिशयोक्ति न होगी। भारतेन्दुयुगीन प्रमुख नाटककार और उनके नाटक का विवरण आगे है।

प्रतापनारायण मिश्र- 'हठी हम्मीर', 'दूध का दुध', 'पनी का पानी', 'जुआरी', 'फूआरी', 'कलि कौतुक रूपक', राधाकृष्ण दास- 'महाराणा प्रताप', 'महाराणी', 'मद्मावती', 'दुःखिनी-बाला', 'धर्मालाप', अंबिकादत्त व्यास- 'ललिता भारत सौभाग्य', बदरीनारायण चौधरी प्रेमघन- 'भारत सौभाग्य' और 'वारांगना रहस्य', लाला श्रीनिवास दास- 'संयोगित स्वयंवर', 'प्रह्लाद चरित्र', 'नटता संवरण', 'रणविर प्रेम मोहिनी', बालकृष्ण भट्ट- 'सीता वनवास', 'शिशु

पाल वध', 'चंद्रसेन', 'नल दमयंती स्वयंवर', 'वेण सैहल', देवकी नंदन त्रिपाठी- 'रामलीला', 'रुक्मिणी हरणं', 'कंस वध', 'बाल विवाह', किशोरी लाल गोस्वामी- 'प्रणयिनी परिणय', 'मयंक मंजरी' आदि।

1.4.3 प्रसाद युग

हिन्दी नाट्य साहित्य को प्रौढत्व देने का कार्य वास्तव में जयशंकर प्रसाद ने ही किया है। प्रसाद युग हिन्दी नाट्य-सृजन के उत्थान का युग है। इसी काल में हिन्दी साहित्य में उच्चकोटि के नाटकों का प्रादुर्भाव हुआ था। "राजनीतिक, सामाजिक क्षेत्र में गाँधीजी की भांति प्रसाद ने हिन्दी नाट्य कला को प्राचीन मर्यादाओं की अनावश्यक रूढियों से उन्मुक्त कर जीवन की नवीन स्फूर्ती से विकासोन्मुख बनाया।"[21]

नाटकों के कथानकों का चयन भारत के गैरवपूर्ण अतीत से किया है। उन्होंने ऐतिहासिक और पौराणिक कथानक के माध्यम से वर्तमान समस्याओं को प्रस्तुत किया है। हिन्दी में एक दर्जन से अधिक नाटकों की रचना की है। उनमें प्रमुख है- सज्जन, कल्याणी परिणय, करुणालय, प्रायश्चित, राज्यश्री, विशाख, अजातशत्रु, कामना, स्कन्दगुप्त, जनमेजय का नागयज्ञ आदि।

प्रसाद के समकालीन नाटककार और उनके नाटकों का परिचय आगे है।

बदरी नाथ भट्ट- 'कुरुवन दहन', 'दुर्गावती', 'वेन चरित्र', 'चन्द्रगुप्त', 'लबड घोघो', 'विवाह', 'विज्ञापन', 'मिस अमेरिकन' आदि। डॉ. बलदेव मिश्र- 'वासना वैभव', 'शंकर दिविजय', 'समाज सेवक', 'मृणालि परिणय' आदि।

---

[21] हिन्दी नाटक उद्भव और विकास - डॉ. दशरथ ओझा, पृ.270

माखनलाल चतुर्वेदी- 'कृष्णार्जुन युद्ध', सुदर्शन- 'दयानंद', 'धूप', 'छाँह', 'आनररी मजिस्ट्रेट', जी.पी. श्रीवास्तव- 'गडबड झाला', 'भर्दानी औरत', 'कुर्सीमेन', 'भक्तिन' आदि। हिन्दी नाट्य जगत को नयी दिशा प्रदान करने का कार्य प्रसाद और उनके समकालीन नाटककारों ने किया है।

1.4.4 प्रसादोत्तर

प्रसादयुगीन आदर्शो को छोडे बिना, समस्या नाटकों की रचना को लेकर आगे बढ़नेवाले नाटककार ही इस युग के अंतर्गत आते है। नयी भाव भूमि और नये शिल्प-विधि से युक्त ऐसे नाटकों में पश्चिमी जगत के नाट्यकता और विचारधारा का स्पष्ट प्रभाव है। प्रसादोत्तर युग में ऐतिहासिक, समस्यामूलक, गीतनाट्य, रेडियोनाटक आदि विविध प्रकार के नाटक रचे गये। इस युग के प्रमुख नाटककारों और उनके प्रमुख नाटक यों है।

वृन्दावनलाल वर्मा - 'सेनापति दल', 'पूर्व की और', 'कश्मीर का कोटा', 'धीरे-धीरे', 'मंगलसूत्र', 'पायल' आदि। हरिकृष्णप्रेमी - 'ममता', 'छाया', 'बंधन', 'शिवा साधना', 'प्रतिशोध' आदि। सेढ गोविन्ददास - 'पाकिस्तान', 'दुख क्यों', 'बडा पापी कौन', 'हिंयाया अहिमा', 'भूदान यज्ञ' आदि। गोविन्द वल्लभ पंत- 'वरमाला', 'राजमुकुट', 'अन्तःपुर का छिद्र', 'ययादि', उदय शंकर भट्ट- 'विद्राहिणी अंबा', 'सागर विजय', 'शक विजय', 'मुक्ति-पथ', 'मत्स्यगंधा' आदि। डॉ. रामकुमार वर्मा- 'विजय पर्व', 'अग्निशाखा', 'पृथ्वी का स्वर्ग', 'जय भारत', 'अशोक को शोक' आदि। इब्सन और शाह से प्रभावित होकर हिन्दी में समस्या- नाटकों की रचना हुई थी। इसमें लक्ष्मीनारायण मिश्र, उपेन्द्रनाथ अश्क

आदि उन्में प्रमुख है। लक्ष्मीनारायण मिश्र- 'सन्यासी', 'राक्षस का मंदिर', 'मुक्ति का रहस्य', 'राजयोग', 'सिंदूर की होली', 'कवि भारतेन्दु', 'मृत्युंजय' आदि। उपेन्द्रनाथ अश्क- 'अंजोदीदि', 'जय-पराजय', 'अलग-अलग रास्ते', 'कैद उडान', भंवर आदि। इस युग की समस्त नाटककारों ने हिन्दी नाट्य साहित्य के विकास के लिए अपना महत्वपूर्ण योगदान प्रदान किया है।

1.4.5 स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी नाटक

आज़ादी के बाद विशेष रूप से सन्, साठ के दशक में हिन्दी नाटकों में एक नया भावबोध का जन्म हुआ। नाटक पौराणिक, ऐतिहासिक धरातल से उतरकर जीवन से निकट आने लगा।

आलोच्य काल के प्रमुख नाटककार और उनके नाटक का विवरण आगे है जगदीश चन्द्र माथुर- 'कोणार्क', 'शारदीया', 'पहल राजा', मोहन राकेश- 'आषाढ़ का एक दिन', 'लहरों का राजहंस', 'आधे-अधूरे', लक्ष्मीनारायण लाल- 'अंधा कुआ', 'मादा काक्ट्स', 'रात रानी', 'रक्त कमल', 'कलंकी' आदि। ज्ञानदेव अग्निहोत्री- 'नेफा की एक शाम', 'शुतुर्मूग', 'अनुष्ठाना', आदि। सुरेन्द्रवर्मा- 'द्रौपदी', 'सूर्य की अंतिम किरण से पहली किरण तक', 'सेतुबंध', 'कैद-ए-हायात', 'आठवाँ सर्ग', 'छोटे सैयद बडे सैयद', मुद्रा राक्षस- 'तेन्दुआ तिलचप्ठा', 'मरजीवा', 'यॉर्स फैथफूली' आदि। गिरिराज किशोर- 'नरमेध', 'प्रजा ही रहने दो' आदि। विष्णु प्रभाकर- 'टूटते परिवेश', 'युगे-युगे क्रांती', 'तीसरा आदमी' आदि। मन्नु भंडारी- 'बिना दीवारों के घर', शंकर शेष- 'फन्दी', 'एक

ओर द्रोणाचार्य', विपिन अग्रवाल- 'तीन अपाहिज', 'लोटन', 'कुत्ते की मौत' आदि। हमीदुल्वा- 'दरिन्दें', 'उत्तर अर्वशी', 'उलझी आकृतियाँ', 'समय-संदर्भ' आदि। सुशील कुमार सिंह- 'नागपाश', 'उग उगे गये', 'सिंहासन खाली है' आदि। मणि मधुकर- 'रस गंधर्व', 'दुलारी बाई', 'खेला पोलम पुर' आदि। मृणाल पांडे- 'मौजूदा हालात को देखते हुए', 'आदमी जो मछुआरा नहीं' आदि।

ऊपर बताये हिन्दी नाटक परंपरा में और भी अनेक प्रमुख नाटककार है जिनका योगदान हिन्दी नाटक साहित्य को संपन्न किया है। कुसुम कुमार, ज्ञानदेव अग्निहोत्री, सुरेन्द्रवर्मा, भीष्म साहनी, हमीदुल्ला, शरदमोडी, मुद्राराक्षस, स्वदेश दीपक, ऋतुमती, हबीब तनवीर, नागबोडय आदि प्रमुख है।

हिन्दी नाटक ऐसे नये नाटककारों की नयी चेतना से संपन्न दिखाई देता है जो नाट्य प्रेमियों और नाटक परंपरा के लिए खुशी की बात है।

1.5 हिन्दी में महिला लेखन

आज साहित्य कितने व्यापक सरोकारों तथा बहुआयामी संदर्भों में लिखा जा रहा है, उनमें स्त्री भी लेखन में अपना सहभाग दे रही है और अपनी एक पहचान बना रही है। साहित्य के क्षेत्र में स्त्री का सहभाग नया नहीं है। स्त्री-शिक्षा और आर्थिक स्वालंबन के कारण नारी को अपने व्यक्तित्व की अलग पहचान मिलने लगी है। सामाजिक मूल्यों के साथ उस में व्यक्तित्य मूल्य और अपना अस्तित्व बोध उभरने लगा है। आज उसकी सहभागिता स्त्री-अस्मिता और स्त्री स्वतंत्रता को लेकर चल रही है। भारत के बदलते परिदृश्य में उनका साहित्य स्त्री की स्वतंत्रता, उनके वैचारिक विस्तार और नये संस्कार संदर्भों को रेखांकित करते है। साहित्यक क्षेत्र में महिलाओं

की सर्जनात्मक प्रतिभा स्वातंत्र्योत्तर काल में ही तीव्रता के साथ उभरने लगी है। आज़ादी के बाद जागरण की नई चेतना की लहर चल पडी थी। उसमें महिलाओं को आत्माविष्कार के नये संदर्भों से जोड दिया। साहित्य रचना में भागीदारी देकर लेखिकाओं ने सबसे पहले अपने हीनत्व बोध को नकारते हुए पुरुष के समकक्ष अपने को उपस्थित करने का कार्य किया। साहित्य क्षेत्र में पुरुष के वर्चस्व को चुनौती देती हुई आनेवाली इन महिलाओं ने अपनी मौलिक प्रतिभा के बल पर यह सिद्ध किया कि संवेदनात्मक स्थितियों की गहराई को आँकने में स्त्री-पुरुष से कहीं आगे है। उनकी दृश्टि पुरुष लेखकों की दृष्टि से नितांत भिन्न रही है। यह भेद विषय चयन में नहीं, आविष्कार के ढंग में पात्रों के विज्ञान में भावानुभूति के स्तरों में भी देखा जाता है। "साहित्यकार का मूल धर्म है सृजन/सृजन के उत्स में जो पीडा और संवेदना है, जो अनुभूति और दृष्टि है, जो उल्लास और उन्मेष है, उन्में महिला और पुरुष साहित्यकार की समानता भी और अंतर भी। वे दोनों एक ही जीवन के भोक्ता है फिर भी उनके जा हाशिए अलग है उनकी व्याख्याओं के मर्म अलग है, उनकी अनुभूतियों की अभिव्यक्ति अलग है क्योंकि कही कूध है कि पुरुष और स्त्री होकर भी अलग है और अलग होकर भी एक है। अभिव्यक्ति की कई समस्यायें और कई संकट सब साहित्यकारों के लिए समान है, इसमें कोई संदेह नहीं। किन्तु अभिव्यक्ति के कुछ पडाव और प्रतिबंध एवं कुछ अवरोध और अभिलोग ऐसे है जो भारतीय महिला साहित्यकारों की अपनी विशेष विरासत है।"[22] हिन्दी में लेखिकायें अपनी क्षमता के बलबूते पर अभिव्यक्ति के इस क्षेत्र में पूरी ईमानदारी के साथ प्रयत्नशील है। स्वातंत्र्योत्तर भारतीय मध्यवर्गीय स्त्रीयों के जीवन को समग्र रूप से पकडने का

---

[22] नये आयामों को तलाशती नारी कमला सिध्वी- महिला साहित्यकार और अभिव्यक्ति का संकट (लेख) - सं. दिनेश नंदिनी डालमिया, रश्मि मलहोत्रा, पृ.91

प्रयास उन्होंने किया है। समाज का बृहद परिदृश्य उनके सामने है। सांस्कृतिक संकट के भी ज्वलंत पक्षों से वे जूझ रही है नई भाषा और नये रचनात्मक स्वर उनकी खूबी है। उनकी रचनायें सांस्कृतिक संकट की विविधायामी अभिव्यक्ति है। एक पुरुष-प्रधान सामाजिक व्यवस्था के विषम सामाजिक वातावरण महिला लेखिकाओं के लेखन के मूल में है। नारी पर होनेवाला अन्याय, अत्याचार तथा नारी मन की कुंठा, घुटन को प्रकट करना इनके लेखन की विशेषता रही है साथ ही बाहर की सभी बातों पर उनका लेखन, महिला साहित्य की विशिष्टताओं की ओर ध्यान खीचतें है। महिला लेखक समाज के साथ अपने वाङमय के माध्यम से जो न्याय किया, उन पर सोचने की ज़रूरत आ पडी है। हिन्दी साहित्य को महिलाओं का देन अमूल्य है। आधुनिक काल में महिलाओं ने काफी तादात में अपनी लेखनी से आधुनिक महिला को महामंडित किया है। कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक आदि क्षेत्रों में महिला साहित्यकारों की भागीदारी अभूतपूर्व है। एक पुरुष वर्चस्व समाज में नारी अपने बारे में क्या सोचती है, समाज के ऊपर उसके दृष्टिकोण क्या है, अपनी परिस्थितियों से वह कितना कुछ सजग है ये सब जानने के लिए महिला लेखन स्पष्ट एहसास बनकर हमारे सम्मुख खडी है। इनका लेखन सच्चाई और बेबाक प्रसंगों के साथ साथ पाठकों की चिंताओं तथा मनोवेगों को उचित ढंग से समृद्ध करता है।

1.6 हिन्दी की महिला नाटककार

अन्य सभी क्षेत्रों की तरह नाटक-साहित्य का क्षेत्र में भी महिलाओं के लिए अछूत न रहा। नाटक के क्षेत्र में भी वे अपनी सर्जनात्मकता का परिचय दे चुकी है। बदलते सामाजिक परिवेश के प्रति उनकी प्रतिबद्धता उनके नाटकों में हम देख सकते है। अपनी ही परिस्थितियाँ उसे ऊर्जा देने में भददगार है क्योंकि सारे परिवेश, जो

उसके इर्द गिर्द ही घटित है। किसी भी साहित्य विधा के जैसे महिला नाटक का आधार भी भारतेंन्दु युग से संबद्ध है। स्वतंत्रता संग्राम से स्वतंत्रता प्राप्ति तक लगभग सौ साल के अन्तर्गत हिन्दी नाट्य-साहित्य के इतिहास में केवल एक ही महिला नाटककार का नाम प्राप्त है श्रीमती लाली देवी। लेकिन साहित्येतिहास के लेखकों द्वारा उनकी ओर उतना ध्यान नहीं दिया गया।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद छठे-सातवें दशक से महिला रचनाकारों ने साहित्य-सृजन की ओर विशेष लगाव रहा। लेकिन वह भी नाटक के अलावा अन्य साहित्यक विधाओं में। सुमन राजे की राय में- "एक बार कथा साहित्य को अपनाने के बाद महिला रचनाकार बहुत कम, लगभग न के बराबर अल्प विधाओं की ओर गयी। इसके ठोस सामाजिक और रचनात्मक कारण ज़रूर रहे होंगे। एक सूत्र तो निर्विकल्प रूप से स्वीकार किया जा सकता है और वह यह है कि कथेतर गद्य खुले मैदान का गद्य है, इसीलिए महिला रचनाकारों ने उस ओर जाने का साहस, हाँ साहस कम किया है। कविता यदि दर्पण में देखकर पत्थर चलाना था, तो कथ्य-साहित्य अपने रचे नाम रूपों को अपनी प्रतिनिधि के रूप में उतार देना। लेकिन अन्य विध्यायें बीच की पर्देधारी को पसंद नहीं करती शायद इसीलिए गद्य के संदर्भ में महिला लेखन का अर्थ कथा लेखन ही रहा।"[23] साहित्य-रचना में नाटक-रचना महिलाओं के लिए अछूते रहने का स्पष्टीकरण इससे ज्यादा ओर कहीं से न मिलेगा। प्रस्तुत अध्याय में, हिन्दी साहित्याजगत में अब तक जितनी महिला नाटककार उपलब्ध है उनमें चुने हुई महिला नाटककारों का जिक्र करने का प्रयास किया गया है।

---

[23] हिन्दी साहित्य का आधा इतिहास - डॉ. सुमन राजे, पृ.294

1.6.1 श्रीमती लाली देवी

हिन्दी साहित्य में सर्व प्रथम महिला नाटककार होने योग्य भारतेन्दु युग की श्रीमती लाली देवी को है। उनके ही मतानुसार उनके नाटक 'गोपीचंद' का 15 दिनों में सृजन हुआ है। गोपीचंद उनका एकमात्र नाटक है।

1.6.1.1 गोपीचंद

यह एक आदर्श प्रधान नाटक है। इसमें गोपीचंद की दो संपत्तियों का पारस्परिक प्रभाव चित्रित किया है। डॉ. गोपीनाथ तिवारी की राय में- "इस नाटक में आदर्श स्थापन करने का प्रयास हुआ है। फिर भी यह नाटक विद्वानों की दृष्टि में साधारण कोटी के नाटकों में ही स्थान रखता है।"[24] व्रजरत्न दारा ने प्रस्तुत नाटक के बारे में अपना मत इस प्रकार प्रकट किया है कि यह नाटक सभी दृष्टियों में अच्छा बन पडा है। नायक गोपीचंद की मैनावती तथा नव पत्नी कूसूदा के विलापों में स्त्री हृदय का खुल्लम-खूल्ला वर्णन मिलता है। महाराज गोपीचंद भर्तृहरि के चरित्र से संबंधित यह नाटक बहुत श्रेष्ठ है। इसमें नारी को प्रमुख स्थान दिया गया है। नाटक के गीत अति सुन्दर है।

1.6.2 श्रीमती अनुरूपा देवी

दूसरा नाम श्रीमती अनुरूपा देवी का है। महिला नाटककारों की श्रेणी में। उनका एकमात्र रचना 'कुमारिल भट्ट' है। इसका प्रकाशन 1934 में आर्य महिला हितकारिणी महापरिषद काशी से हुआ।

---

[24] भारतेन्दु के नाटकों का शास्त्रीय अनुशीलन -गोपीनाथ तिवारी, पृ.22

1.6.2.1 कुमारिल भट्ट

पाँच अंकों वाला नाटक है कुमारिल भट्ट। इसमें आर्य धर्म को उन्नति पर पहुँचाने में अक्षम महात्मा कुमारिल भट्ट की वैदिक धर्मेद्धार पद्धति का परिचय मिलता है। वैदिक भावनाओं और मान्यताओं से दमघुटकर जीने की हाल से मुक्त कराने का प्रयास अपने तर्कबल और चरित्रबल से उन्होंने किया है।

1.6.3 कुटुमप्यारी देवी सक्सेना

हिन्दी महिला नाटककारों में कुटुमप्यारी देवी सक्सेना का प्रमुख स्थान है। उनका एक ही नाटक 'वीर सती, सरदार बाई' ज्ञात है।

1.6.3.1 वीर सती सरदार बाई

इस नाटक का प्रकाशन वर्ष 1936 है। एक ऐतिहासिक नाटक है यह। इसमें वीरांगना सरदार बाई द्वारा समाज और राष्ट्र को मिले योगदान वर्णित है। प्रस्तुत नाटक राष्ट्रप्रेम से ओतप्रोत है।

1.6.4 श्रीमती तारा प्रसाद वर्मा

स्वतंत्रतापूर्व हिन्दी महिला नाटककारों में तारा प्रसाद वर्मा का नाम उल्लेखनीय है। 1939 में प्रकाशित 'आजकल' नामक नाटक उनके द्वारा प्रकाशित एकमात्र उपलब्धी है।

1.6.4.1 आजकल

तीन अंकों वाला नाटक है आजकल। इस सामाजिक नाटक द्वारा देशसेवा और देशप्रेम जगाना उनका लक्ष्य था। यह भी उद्देश्य था कि गांधीजी की छाया में,

अनबूझ लोग निरपराधियों पर कितना अत्याचार करते है। नाटक का अस्तित्व वास्तविक धरातल पर उतरे समय में ही तारा प्रसाद शर्मा का साहित्य सृजन हुआ था। अतः तत्कालीन परिस्थितियाँ ही उनके नाटक में भरे पडे है। तत्कालीन कपट, गांधीवादियों और चापलूस कांग्रेसों पर प्रहार नाटक का लक्ष्य रहा।

1.6.5 श्रीमती शिवकुमारी देवी

श्रीमती शिवकुमारी देवी स्वतंत्रतापूर्व युग में हिन्दी महिला नाट्य लेखन को संपन्न बनानेवालों में एक है। उनकी एकमात्र रचना 'चन्द्रगुप्त' प्राप्त है जिसके द्वारा वे ज्यादा ख्यातिप्राप्त है।

1.6.5.1 चन्द्रगुप्त

यह 1939 ई में रचित नाटक है। 'चन्द्रगुप्त' नाम से ही समझ सकते है कि यह एतिहासिक नाटक है जो गुप्तकाल से संबंद्ध है। यह नाटक सम्राट चन्द्रगुप्त के जीवन चरित्र को रेखांकित करता है और तत्कालीन परिस्थितियाँ व्यक्त करता है।

1.6.6 श्रीमती कंचनलता सब्बरवाल

प्रसादयुगीन महिला नाटककार है कंचनलता सब्बरवाल। एम.ए, पी.एच.डी तथा शास्त्री जैसी उपाधियों से प्रतिष्ठित कंचनलता लखनऊ के महिला कालेज में प्राध्यापिका रही है। ऐतिहासिक, सामाजिक, राष्ट्रीय नाटकों की रचना की है

उन्होंने। 'आदित्यसेन गुप्त', 'अमिया', 'अनंता', 'भीगी पल्कें', 'आंधि और तूफान' आदि उनके प्रकाशित नाटक है। आपके अधिकांश नाटक ऐतिहासिक है।

1.6.6.1 आदित्यसेन गुप्त

इस नाटक में गुप्तवंशी मगध सम्राट आदित्यसेन गुप्त की वीरता पूर्ण कार्यों का नये सुन्दर ढंग से वर्णन किया है। देश गौरव की महित्ता दर्शाने तथा बनाये रखने का परिश्रम इस नाटक में किया गया है। कुमार आदित्यसेन के माध्यम से देश प्रेम की ज्वाला धधकाने की कोशिश नाटक में है। यह देशप्रेम के अनुपम, अभूतपूर्व नमूना है। आदित्यजननी श्रीमती देवी उसे युद्धादि से दूर रख परियों के लोक में रखना चाहती है। देवप्रिया जिसे आद्यंत प्राणाधिक प्रिय है, तो भी वह उसे माँ की आकांक्षाओं के विरुद्ध देश गौरव को उन्नत करने की शिक्षा देती है। श्रीमती देवी को अन्य सैनिकों के प्रति भी उदार बनने को कहती है। जीवन की सार्थकता एवं व्यक्तित्व की पूर्णता के लिए नारी एवं पुरुष दोनों की आपसी पूरकता अनिवार्य है। प्रस्तुत नाटक वीरभावना और हृदय की कोमल वृत्तियों को साथ-साथ लिये है।

1.6.6.2 अमिया

तीन अंकों वाला नाटक है 'अमिया'। 'अमिया' एतिहासिक नाटक में अमिया की वीरता, प्रेम, देशसेवा, तथा प्रेमी राजकुमार वज्रगुप्त के प्रति पूर्ण श्रद्धा व्यक्त किया है। डॉ. दशरथ ओझा के हिन्दी नाटक कोश से प्रस्तुत नाटक की कथावस्तु प्राप्त है। इस में अमिया की वीरता तथा युगीन परिस्थितियों को आंका गया है। यह एक मंचीय नाटक है।

1.6.6.3 अनंता

अनंता 1959 का नाटक है। इसमें ज्ञानेश्वर के वर्धनों, मालवा के गुप्तों, और कनौज के मौखरी राजाओं की पारस्परिक ईर्ष्या, शत्रुता तथा मित्रता का वर्णन मिलता है। अनंता का देवगुप्त को हमेशा सन्मार्ग पर लाने के प्रयत्न के साथ उनके प्रति रहा प्रेम भी इसमें चित्रित है। यह आपका दूसरा नाटक है।

1.6.6.4 लक्ष्मी बाई

1857 के प्रथम स्वाधीनता संग्राम की गाथा नाटकीय रूप में प्राप्त है। लक्ष्मीबाई द्वारा दिखाई गयी, वीरता, तेजस्विता तथा अंग्रेज़ो के सारे तंत्रों को विफल करने के लिए सक्षम उनकी कुशलता इस नाटक की कथावस्तु है।

1.6.6.5 भीगी पलकें

एक सामाजिक नाटक है। इसमें स्त्री और राष्ट्र के प्रति आदरभाव प्रकट की है। नारीवादी विचारों का सशक्त उदगार नाटक में प्राप्त है।

1.6.6.6 आँधी और तूफान

आलोच्य नाटक परिवार तथा राष्ट्रप्रेम, दोनों पर ज़ोर देने वाला है। भारत पर चीनी हमला की प्रतिक्रिया स्वरूप लिखा गया नाटक है यह। परिवार के सभी सदस्य राष्ट्र के लिए अपने जान तक देने के लिए तैयार होने से, पारिवारिक महता के साथ राष्ट्रप्रेम को भी उजागर करते है।

1.6.6.7 माँ की लाज

'माँ की लाज' में भारतवासियों की, अपने देश के प्रति रखनेवाली निष्ठा का उत्तम रूप दर्शनीय है। नाटक की विशेषता यह है कि जातियता की संकीर्ण मनोवृत्ति

और आपसी कलह को उपेक्षित करके अपने देश के लिए सर्वस्व न्योछावर करने के लिए तैयार हुए कुछ लोगों को चित्रित किया है। देशप्रेम तथा जातिभेद से दूर एक आदर्श समाज का चित्रण 'माँ की लाज' में हम देख सकते है।

1.6.7 डॉ. मिथिलेश कुमारी मिश्र

उत्तरप्रदेश में जन्में मिथिलेश कुमारी हिन्दी महिला नाटककोश में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। उनके द्वारा सृजित रचनायें मात्रा-विविधता तथा गुणवत्ता तीनों ही दृष्टियों से प्रभावी और श्रेष्ठ है। पौराणिक चरित्रों को लेकर चलनेवाला 'कीचक वध' और 'धनंजय विजय' जैसे श्रेष्ठ नाटक पौराणिकता को कायम रखके समसामयिक चेतना को प्रभावोत्पादक ढंग से प्रस्तुत करते है।

1.6.8 शोभना भूटानी

महिला नाटककारों में शोभना भूटानी का अपना विशिष्ट स्थान है। शोभना भूटानी ने, नाटक के प्रचलित ढंग से अलग चलकर अपनी विशिष्ट शैली का परिचय दिया है। 'शायद हाँ' उनका एकमात्र नाटक है।

1.6.8.1 शायद हाँ

शोभना भूटानी का एकमात्र नाटक है 'शायद हाँ'। दो पात्रोंवाला प्रस्तुत नाटक अब तक के प्रचलित ढंग से कुछ हटकर बिना कथानक, बिना घटनाओं बिना मंचीय परिवर्तनों और बिना पात्रों के आने जाने के क्रम से आगे चलता है। पति-पत्नि के चिरंतन द्वन्द इस नाटक का विषय है। नारी-पत्नी का पद और स्वतंत्र व्यक्तित्व दोनों एक साथ चाहती है तो हमेशा के लिए संघर्ष को कायम रखती है।

1.6.9 मन्नु भंडारी

मन्नु भंडारी हिन्दी साहित्य में बहुत ख्याति प्राप्त लेखिका है। पिता से पैतृक में मिली लेखन संस्कार से नाटक, उपन्यास जैसी विधाओं में अपनी दक्षता दिखाने में उन्हें मदद मिली। एम.ए तक शिक्षित मन्नु जी ने दिल्ली विश्वविद्यालय के मिरांडा हाउस में प्राध्यापिका के रूप में कार्य किया। नारी जीवन की जटिलताओं को उघाडने में उनका साहित्य कामयाब रहा। 'भहाभोज', 'आपका बंटी, 'स्वामी', 'एक इंच मुस्कान', 'कलवा' आदि उनके उपन्यास और 'एक प्लैट सैल्ष', 'में हार गयी', 'तीन निगाहों की एक तस्वीर', 'यहीं सच है', 'त्रिशंकु' आदि उनका प्रसिद्ध कहानी संग्रह है। 'बिना दीवारों के घर' उनका नाटक है जो जीवंत समस्याओं से ओतप्रेत है।

1.6.9.1 बिना दीवारों का घर (1965)

मध्यवर्गीय परिवार में लक्षित वैवाहिक जीवन की समस्यायें इस नाटक की प्रेरणा है। घर के दीवारों के बीच आदमी अपने को सुरक्षित मानता है। जब मानवीय सहज स्नेह, विश्वास, और आत्मदान जैसे त्याग से संबंद्ध बनते निभाते चलते है, तभी 'घर' बनता है। और एक भावनात्मक परिवेश बनाता है। इन सबके अभाव में घर बिना दीवारों का घर बनता है। पुरुष प्रधान संस्कृति में पुरुष स्त्री को अपनी निजी संपती समझता है, उसे अपने विचारों के अनुसार ढालना चाहता है। भारतीय नारी की नियति का चित्रण उसमें पाते है।

डॉ. श्याम सुन्दर पांडेय की राय में "एक तरफ पुरुष आधुनिक बनने का स्वांग भले ही भर रहा हो लेकिन मानसिक रूप से वह आज भी रूढिवादी ही बना हुआ है। दूसरी तरफ नारी अब पारिवारिक बंधनों को तोड देना चाहती है। वह न केवल पुरुष के अधीन रहकर जीवन यापन करना चाहती है बल्कि स्वयं की भी एक नई पहचान बनाना चाहती है।"[25] नाटक तत्कालीन या चिरकालीन समाज के पुरुष अहंवादिता का स्पष्ट एहसास देता है।

1.6.10 मृदुला गर्ग

मृदुला गर्ग का जन्म 1938 अक्तूबर 25 को कलकत्ता में हुआ। उन्होंने दिल्ली विश्वविद्यालय से अर्थशास्त्र में एम.ए. किया। दिल्ली में प्राध्यापिका के रूप में भी कार्य किया। साथ ही उद्योग बस्तियों में रहकर मज़दूरों की समस्यायें जानने की कोशिश भी की। नाटक, उपन्यास में लेखनी चलायी मृदुला गर्ग ने अभिनय भी किया। उनके प्रमुख उपन्यास है- 'हिस्से की धूप', 'वंशज चित्तकोबरा', 'अनित्य', 'मैं और मैं' आदि। कहानी संग्रह में 'डैफोडिल जल रहे हैं', 'टुकडा टुकडा आदमी', 'कितने कैदें', 'ग्लेशियर' प्रमुख है। 'एक ओर अजनबी', 'तुम लौटजाओं', 'जादू का कालीन' आदि उनके नाटक है। कथा साहित्य में एक बॉल्ड चिंतनशील रचनाकार रही मृदुलागर्ग स्त्री-पुरुष संबंधों के सूक्ष्म से सूक्ष्म स्तरों को लेकर लेखनी चलायी है।

1.6.10.1 एक ओर अजनबी

स्त्री-पुरुष के प्रेम संबंधों का अनेकपक्षीय दृष्टि से उद्‌घाटन करता है। दो पुरुषों के बीच विभजित एक औरत और उसकी विडंबनापूर्ण ज़िन्दगी का चित्रण इस

---

[25] स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी नाटक : संवेदना और शिल्प - डॉ. श्याम सुन्दर पांडेय, पृ.32

नाटक में मिलता है। नाटक में शानी के माध्यम से नारी के अंतर्विरोध और मनोवैज्ञानिक जटिलताओं का सुन्दर चित्रण हुआ है। जगमोहन और इंदर खोसला पति और प्रेमी की भूमिकाओं में पुरुष का सामान्य चरित्र का परिचायक है। ज़िन्दगी के दुविधाग्रस्त मौके पर अपने अस्तित्व को तलाशनेवाली व्यक्ति की नियति नाटक में शानी के माध्यम से प्रस्तुत है।

1.6.10.2 तुम लौट आओ

एक सामाजिक नाटक है तुम लौट आओ। निष्ठुर, कठोर महत्वाकांक्षायें मनुष्य को सामान्य से विशेष की ओर ले जाती है। यही इस नाटक का विषय है। सीता इस नाटक की नायिका है। नये जीवन का आकर्षण सीता की ज़िन्दगी की विडंबना बन जाती है। सीता स्वयं अपनी ज़िन्दगी की त्रासद स्थितियों का कारण है। वह भूल जाता है कि, "ज़िन्दगी में कुछ चुनना पडता है...सब कुछ एक साथ चाहने पर नहीं मिलता।"[26] ऐसा एक आत्म पहचान सीता की ज़िन्दगी संघर्षपूर्ण बनाती है। आधुनिक द्वन्द भरी ज़िन्दगी का स्पष्ट एहसास है तुम लौट आओ।

1.6.10.3 जादू का कालीन

बालमज़दूरी पर आधारित नाटक है 'जादू का कालीन'। चौदह वर्ष के कम उम्र के बच्चों की अंगुलियों की कहानी है 'जादू का कालीन'। प्रस्तुत नाटक ने प्रमुख रूप से बाल मज़दूरों की दयनीय दशा, उनके पुनर्वास, प्रशासनिक भ्रष्टाचार और स्वयंसेवी संस्थाओं से जुडे हुए लोगों के पाखंड को बडे ही मर्मस्पर्शी ढंग से उद्घाटन किया है। कालीन उद्योग में कार्यरत बालश्रमिकों पर आधारित यह नाटक,

---

[26] तुम लौट आओ - मृदुला गर्ग, पृ.92

बाल मज़दूरों की अवस्था, उनके पुनर्वास की समस्या, प्रशासनिक भ्रष्टाचार और अदूरदर्शिता के साथ-साथ स्वयंसेवी संगठनों से जुडे लोगों के पाखंड को भी सामने लाता है। बच्चों से काम करवाकर आर्थिक शोषण करनेवाली बुरी और दर्दनाक नीति इस नाटक में देख पाती है। ऐसे स्वार्थतत्पर बने अधिकारियों के भ्रष्टाचार तथा सरकार की कुरीतियों का नंगा प्रस्तुतीकरण है प्रस्तुत नाटक।

1.6.11 शीला भाटिया

शीला भाटिया का जन्म सियाल कोट में हुआ और वहीं पर उनकी शिक्षा भी हुई। बाद में लाहौर के कालेज से बी.ए तथा सर गंगाराम स्कूल एंड ट्रेनिंग कालेज से बी.टी किया। नाटक और अभिनय के प्रति उनकी अदम्य चाह ही उन्हें गणित विषय के अध्यापन कार्य से अभिनय की प्राध्यापिका की भूमिका तक खींच लिया। उन्होंने नाट्य लेखिका, निर्देशिका, संगीतकार, नृत्य संरचना-परिकल्पना और संयोजक की विविध भूमिकाओं में अपनी प्रतिभा का परिचय दिया है। एन. एस.डी में अभिनय की प्राध्यापिका रही शीला भाटिया ने अपने नाटकों के द्वारा खोये हुए मानवमूल्यों को ढूँढ लाने को और इनसानियत को श्रेष्ठ दिखाने की कोशिश की है। शीला भाटिया नाटककार के साथ-साथ ही निर्देशक, अभिनेत्री, आदि भूमिकाओं में भी अपनी निपुणता दर्शायी है। 'काल आफ द वाली', 'रूक्खे खोत', 'हीर संज़ा', 'नादिशाह', 'मानसरोवर', 'तेरे मेरे लेख', 'धरती' आदि उनके पंजाबी, उर्दु हिन्दी में लिखित एवं निर्देशित नाटकों में प्रमुख है। बहुमुखी प्रतिभा धनी शीला भाटिया, मध्यप्रदेश सरकार का सर्वेच्चि पुरस्कार और भारत सरकार का पद्मश्री पुरस्कार से सम्मानित है।

1.6.11.1 दर्द आयेगा हबे पाँव

प्रस्तुत नाटक 1979 में लिखित है। उर्दु के महान शायर फौज अहमद फैज की शायरी, व्यक्तित्व और जीवन पर रचित है प्रस्तुत नाटक। शायर के व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति करनेवाला यह नाटक दो अंकों में और सत्तर गज़लों और नज्मों पर आधारित है। फैस की शायरी और उनके द्वारा झेली गयी कठिनाइयों को पेश करने को यह नाटक सक्षम है। नाटक शायर के जीवनगाथा के साथ-साथ तत्कालीन शिक्षा व्यवस्था, राजनीति आदि पर भी व्यंग्य है। श्रीमती विनोद जैन की राय में नाटक की कथा "आधुनिक शिक्षा व्यवस्था में व्याप्त भ्रष्टाचार और व्यावसायिकता को प्रस्तुत कर नाटक को समसामयिक संदर्भों से जोडकर आर्थिक और सामायिक चेतना को अभिव्यक्त करता है।"[27] इस प्रकार एक शायर के व्यक्तित्व और कृतित्व पर लिखा गया प्रस्तुत नाटक तत्कालीन समाज के सारे पक्षों को उभारता है।

1.6.12 शांती महरोत्रा

शांती महरोत्रा का जन्म 9 मार्च 1926 को राजस्थान के नेनवाँ में हुआ था। लखनऊ विश्वविद्यालय में अर्थशास्त्र में एम.ए प्राप्त किये और बाद में आकाशवाणी के इलाहाबाद केन्द्र में प्रोडूसर के तहत अनेक रेडियो नाटकों की रचना की। प्रसिद्ध नाटककार के साथ-साथ कवयित्री कहानीकार-व्यंग्यकार आदि रूपों में वे बहुचर्चित रही। कविताओं से साहित्य यात्रा शुरू किये उनके प्रसिद्ध काव्य संग्रहों में 'निष्कृति' 'मरीचिका', 'रेखा', 'पगध्वनी' आदि प्रमुख है। हास्य-व्यंग्य में 'सूरखाब के पर',

---

[27] स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी महिला नाटककारों के नाटकों में सामाजिक चेतना- विनोद जैन, पृ.53

'दंतकथा' जीवनियों में 'आनीष्चन्द' तथा 'विश्रुत नारियाँ', बाल नाटकों में 'सेर को सवा सेर' तथा मूर्गे की चोरी आदि श्रेष्ठ है। 'ठहरा हुआ पानी' और 'एक ओर दिन' उल्लेखनीय नाट्य रचनायें है।

1.6.12.1 ठहरा हुआ पानी

प्रस्तुत नाटक में पारिवारिक विघटन, मूल्यों के अंतर और पीढियों के संघर्ष तथा संवेदनाऐं भरपूर है। तीन अंकों में विभाजित 'ठहरा हुआ पानी' में पिताजी के कठोर अनुशासन में रहकर तडपनेवाले सन्तानों की दयनीय अवस्था का अंकन है। परिवार की इस विघटनात्मक स्थिति के बारे में सीता कहती है-"सब टूटता चल जाता है, जुडता कही कुछ नहीं, भीतर कितनी घुटन है। कितना अंधेरा है।"[28] नाटककार की दृष्टि से यह नाटक एक अर्थहीन जीवन और उसकी अंतहीन व्यवस्थता की कहानी है। जीवन की जडता, ठहराव, एकरसता इस नाटक में व्यक्त किया है जो शीर्षक को सार्थक बनाता है।

1.6.13 विमला प्रभाकर

विमला प्रभाकर का जन्म 1936 सितंबर को हुआ। पहले ही उन्हें साहित्य में रुची थी। उनकी कहानी 'शिकस्त' हिन्दी में सबसे अधिक चर्चित कहानी है। कविता के क्षेत्र में भी उनका महत्वपूर्ण योगदान रहा। हिन्दी साहित्य का एक प्रतिष्ठित हस्ताक्षर है विमला प्रभाकर जो "भरत की आत्मा' नामक एकमात्र नाटक से ही उन्हें ख्याति प्राप्त है।

---

[28] ठहरा हुआ पानी - शांती महरोत्रा, पृ.36

1.6.13.1 भरत की आत्मा

'भरत की आत्मा' पौराणिक, ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक परिवेश पर आधारित पहला नाटक है। नाटक की कथा राम-राज्य से लेकर स्वतंत्रता प्राप्ति तक की समय-सीमा में है जो उस समय की घटनाओं को लेकर चलता है। इस सीमा में राम, कृष्णा, बुद्ध, अशोक जैसे महारथ भी है और पृथ्वीराज चौहान तथा चन्दबरदाई जैसे समाज श्रेष्ठ भी।

समाज में आलस्य, प्रसाद, असत्य, लोभ, मोह, हिंसा आदि लक्षण बढ गये थे। इस विश्व में स्वार्थ की कोई सीमा नहीं। भरत इन घटना-क्रमों का मूक-नायक बना है। खिन्न मन से सोचता है- "ऋषि मुनियों की तपोभूमि भरत की यात्रा कर राम ने अपने भाग्य को सराहा था। आज कहाँ गया भारत? कहाँ गयी उसकी अद्वैत परंपरा? भाई से भाई का अलगाव, एक राष्ट्र में राष्ट्रवासी से दुराव, जाति, धर्म, भाषा के नाम पर वैमनस्य, ऐसा भारत तो किसी काल में नहीं रहा। कभी नहीं रहा। स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व एक सूत्र में बंधा हुआ देश स्वतंत्र होते ही बिखरने लगा। निहित स्वार्थो की दल-दल में घिरने लगा।"[29] हमें इस सच्चाई को समझना चाहिए कि स्वार्थता एक ऐसी आग है जो अपनी परंपरा, इतिहास, संस्कार, आदर्श सब को जला देती है।

1.6.14 मृणाल पांडे

मृणाल पांडे का जन्म 1946 फरवरी 26 को मध्यप्रदेश के टीकमगढ़ में हुआ है। सुप्रसिद्ध कथाकार शिवानी उसकी माँ है जिनसे उनको लिखने

---

[29] भरत की आत्मा - विमला प्रभाकर, पृ.100

की प्रेरणा मिली। प्रयाग विश्वविद्यालय से एम.ए किया बाद में भोपाल, प्रयाग तथा दिल्ली विश्वविद्यालय में अंग्रेज़ी का अध्यापन कार्य भी किया। मृणाल पांड़े ने पाँच नाटकों की रचना की। नाटककार के साथ-साथ वह कहानीकार, उपन्यासकार, नाट्यरूपांतरकार, पत्रकार भी है। नाटक की ओर उनकी विशेष रुचि थी।

1.6.14.1 मौजूदा हालात को देखते हुए

वर्तमान राजनीति के चुनावी अभियान पर सशक्त व्यंग्य किया है प्रस्तुत नाटक में। आम आदमी समर्थ सत्ताधारियों और उनके पिट्ठु के शिकंजे में फँसकर विवशता, निर्धनता, लाचारी, बेबसी का जीवन झेलती है जो आज हम देखते है और अनुभव भी करते है। देश के जननायक लोकतंत्र के मुखौटे में गांधीवादी आदर्शों की आड लेकर हिंसा, आतंक, असत्य, छल, कपट, सांप्रदायिकता आदि को शास्त्र बनाकर चुनाव जीतते है और कुर्सी पर सटे रहते है। डॉ. विनोद जैन की राय में- "यह नाटक वर्तमान राजनीतिक नीतियों पर एक सशक्त व्यंग्य है जिसे लेखिका ने लोक नाट्यशैली के द्वारा प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया है।"[30] इस प्रकार यह नाटक वर्तमान परिस्थितियों से जन्मा एक सशक्त और तीक्ष्ण राजनीतिक व्यंग्य है।

1.6.14.2 जो राम रचि राखा

विजयदान देथा की राजस्थानी लोककथा पर आधारित कहानी 'खोजी' को केन्द्र में रखकर पिता-पुत्र के वैचारिक द्वन्द को इस नाटक में चित्रित किया है।

---

[30] स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी महिला नाटककारों के नाटकों में सामाजिक चेतना - विनोद जैन, पृ.59

अभिजात वर्ग के विद्रोही तथा क्रांतीकारी मनोवृत्ति पर आधारित नाटक है 'जो राम रचि राखा'। मन्नेसेठ के दोगने चरित्र पर व्यंग्य नाटक का केन्द्र है। भगवान जाधव के अनुसार-"नाटक में धन्ने सेठ के पुत्र मन्नेसेठ का विद्रोही चरित्र जो अपने संस्कारों के प्रति उत्कंट घृणा के बाद भी कहीं अपने वर्ग संस्कारों से अकार्य रूप से जुडा हुआ दिखाई देता है। प्रस्तुत नाटक आज भी अपनी प्रासंगिकता बनाया रखता है।"[31] वैयक्तिक स्वार्थपरता का एक उत्तम प्रतिरूप है इस नाटक का नायक मन्नेसेठ।

1.6.14.3 आदमी जो मछुआरा नहीं था

एक लोक कथा पर आधारित नाटक है 'आदमी जो मछुआरा नहीं था'। राज्य और राजकर्मचारी के रिश्ते, वरदान और अभिशाप के आंतरिक तंतुजाल की त्रासदी आदि नाटक का विषय रहा है। मछुवारे द्वारा मछली रानी से तीन वर मांगने की लोककथा में आम आदमी का मछुआरा बनने और वर माँग-माँगकर सब कुछ छीन लेने की चाह में बदलते है। जयदेव तनेजा के अनुसार-"लेखिका के व्यक्तिगत प्रामाणिक अनुभव और आसपास की कुछेक वास्तविक घटनाओं पर आधारित यह नाटक एक नर्म दिल व्यक्ति के बाहर से बनने और भीतर से टूटने के साथ-साथ उसके घर-परिवार की त्रासदी, राज सता की विडंबना और उसके अंतर्विरोध, प्रजातंत्र में प्रेस की शक्ति और सीमा तथा शासन तंत्र के दुर्दमनीय प्रभाव और निरंकुश स्वाभाव का भी रेखांकन करता है।"[32] व्यक्ति के बाह्य और भीतरी

---

[31] हिन्दी महिला नाटककार - भगवान जाधव, पृ.81

[32] हिन्दी नाटक आजकल - जयदेव तनेजा, पृ.90

अंतर्विरोधों, विवश नियति से उत्पन्न विडंबनाओं, समकालीन जीवन विद्रूपताओं को नाटक बडी कुशालता से उद्‌घटीत करती है।

1.6.14.4 चोर निकल के भागा

फैन्टसी शैली में लिखित यह नाटक वर्तमान उपभोक्तावादी समाज की विसंगतियों को उभारता है। नाटक तीन युवा रंगकर्मी की दार्शनिक विचार-विमर्श से शुरू होता है। आधुनिक संदर्भ में कला, सौन्दर्य-प्रेम और परंपरा जैसे मूल्यों की बिक्री हो रही है और इसमें राष्ट्रीय अंतरराष्ट्रीय स्तर पर कितने ही सफेद पोश शामिल है।

नाटक की अंतःवस्तु को उद्‌घाटित करने के लिए लेखिका ने प्रेम और सौन्दर्य के प्रतीक ताजमहल की चोरी की फैन्टसी की है। "ताजमहल की चोरी? उस सामन्ती प्रेम को उडाओगे? क्या वक्त है उसकी?"[33] मनुष्यजाती की तमाम कलात्मक उपलब्धियों को निरर्थक बनाने को सदास, ख़तरों पर लेखिका ने ज़ोर दिया है जो मानव मूल्यों पर भी आघात पहुँचता है।

1.6.14.5 मुक्ति कथा

मृणाल पांडेय जी का प्रमुख नाटक है 'मुक्ति कथा'। आज़ादी के बाद हमारे प्रजातंत्र में संपादकों, पत्रकारों पर मालिकों द्वारा लगाये गये ज़बरदस्त अंकुश और उनपर किये जानेवाले अमानवीय अत्याचार का घिनौना रूप 'मुक्तिकथा' का विषय है। ऐसे बीमारों की सही जगह सिर्फ पागलखाना है। प्रबुद्ध एवं जागरूक रचनाकार

---

[33] चोर निकल के भागा - मृणाल पांडेय, पृ.20

मृणाल पांडे का यह नाटक अखबार के मालिकों एवं प्रबंधकों की निरंकुशता के सामने एक संवेदनशील हिन्दी पत्रकार की लाचारी और त्रासदी-बहुत कुशलता से चित्रित किया है।

1.6.15 त्रिपुरारी शर्मा

त्रिपुरारी शर्मा का जन्म 1956 जुलाई 31 को दिल्ली में हुआ। प्रेज़ेन्टेशन कान्वेंट स्कूल में शिक्षा प्राप्त किया। राष्ट्रीय नाट्यविद्यालय की स्नातक रही। शर्माजी हिन्दी महिला नाटककारों में ही नहीं बल्कि पूरे नाटक साहित्य में ख्यातिप्राप्त लेखिका है। साहित्य की अन्तर्विधाओं में भी तत्पर त्रिपुरारी जी की, नाटक में विशेष रुचि रही। कविता लेखन, निर्देशन व सचालन के साथ बालरंगमंच तथा नुक्कडनाटक में भी उन्होंने अपनी दक्षता दिखाई है। समाज निष्ठ सृजन-प्रक्रिया द्वारा अपने साहित्य को संपन्न करने में उनका योगदान उल्लेखनीय है। लोककल्याण की भावना से युक्त उनकी लेखन शैली एक समाजोन्मुख मानवतावादी दृष्टिकोण का परिचय देते है। 'काठ की गाडी', 'बहु', 'अक्स', 'पहेली', 'माँ का सपना', 'एहसास', 'बाँझ घाटी', 'विक्रमादित्य का सिंहासन', 'बिरसा मुंडा', 'संपदा', 'रेशमी रुमाल' आदि उनके प्रमुख नाटक है।

1.6.15.1 काठ की गाडी

समाज में कुष्ठरोगियों पर होनेवाले बुरी नज़र पर एक झांकी है प्रस्तुत नाटक। प्रस्तुत नाटक 1986 में लिखा है। राजनीतिज्ञों तथा समाज के मन में कुष्ठरोगियों के प्रति जो अवज्ञा है उसका पर्दाफाश नाटक में हुआ है। लोग कुष्ठरोग संबंधी अंधविश्वास के कारण अपमानित तथा ज़िन्दगी में पीडित होते है। नाटक की

भूमिका में कही है-"आम दर्शक को कुष्ठरोग के बारे में थोडी सी जानकारी देना और उसी दर्शक का कुष्ठरोगियों के जीवन, रहन-सहन और समझ से परिचित करना।"[34] उसके अंतर्मन में यह पीडा है कि मुझे अपने वतन में आम नागरिक के अधिकार नहीं मिल पाए।

1.6.15.2 बहु

एक नारी की खोज रचना है बहु। सामन्ती समाज तथा जर्जर ग्रामीण समाज की एक नारी की खोज बहु का इतिवृत है। "बहु स्त्री समस्याओं पर केंन्द्रित नाट्यरचना है कथावस्तु पंजाब की है, लिहाजा, भाषा में पंजाबी संस्पर्श स्वाभाविक रूप में है। मेरा पुत्तर पापी जगनूं छड गया... रोती माँ को छड गया...गया वो रबा दे घर...।"[35] मज़दूरों और सामन्तों के यथार्थ वातावरण के ज़रिए दो अलग परिवेश की घुटन भरी हालात का स्पष्ट रूप नाटक में चित्रित है। दीपा कुचेकर के अनुसार- "यह नाटक रूढ़ वृत्त से ठीक उलटा है। इसका प्रारंभ तो होता है एक मृत्यु में और मरनेवाले के प्रति शोक से, और अन्त बहु के शिशु के जन्म से ही नहीं बल्कि उसके अपने जन्म से भी होता है, जिससे उसकी सार्थकता सिद्ध होती है।"[36] एक सफल मंचनाटक की कोटि में इसे रखा जा सकता है।

---

[34] काठ की गाडी, भूमिका से - त्रिपुरारी शर्मा

[35] बहु/अक्स पहेली - त्रिपुरारी शर्मा, पृ.12

[36] कुसुम कुमार का नाट्य साहित्य - दीपा कुचेकर, पृ.33

1.6.15.3 अक्स पहेली

अक्स पहेली नाटक के केन्द्र में एक मध्यवर्गीय नारी खडी है। इस नारी की मानसिकता तथा बौद्धिक द्वन्द नाटक में चित्रित है। भगवान जाधव के अनुसार "अतः नाटक नारी के अंतर्मन की पीडा को, कलाकार की वास्तविक जीवन को पौराणिक पात्रों के माध्यम से व्यक्त करता है।"[37] उच्चकोटी की मंचीय गुणों से युक्त प्रस्तुत नाटक का कई बार प्रस्तुतीकरण हुआ है।

1.6.15.4 रेशमी रूमाल

आम हिन्दुस्थानी परिवारों की महिलाओं के जीवन की विसंगतियों पर लिखा गया नाटक है। उनके घुटन, पीडा, कुंठा और विडंबना को प्रस्तुत नाटक उभारता है। शहरी और ग्राम्य जीवन की टकराहट नाटक में चुनौती के रूप में है। जयदेव तनेजा की राय में- "अक्स पहेली, बहु, काठ की गाडी और बांझ घाटी के बाद इस वर्ष के संस्कृति पुरस्कार से सम्मानित त्रिपुरारी शर्मा का यह नया नाटक, उनकी सामाजिक संबंद्धता एवं जागरूकता का एक नया आयाम प्रकट करता है।"[38] प्रस्तुत नाटक का मंचन प्रगति मैदान के 'कादंबरी' आंगन मंच पर मंचित है।

1.6.15.5 पोशाक

पोशाक नाटक की रचना 1991 में हुई है। अस्तित्ववाद का एक झलक नाटक में मिलता है। व्यक्ति के अपनापन और सार्थकता की खोज इस नाटक में हुई है। एक व्यक्ति पर, पारिवारिक, सामाजिक तथा आर्थिक दबावों का दुष्परिणाम ही

---

[37] हिन्दी महिला नाटककार - भगवान जाधव, पृ.89

[38] हिन्दी रंगकर्म दशा और दिशा - जयदेव तनेजा, पृ.187

नाटक का विषय है। एक नवयुवक की निराशा, अकर्मण्यता और दिशाहीनता के ज़रिए नयी पीढ़ी के युवकों को सठीक ढंग से चित्रित किया है।

1.6.15.6 सन सत्तावन की किस्सा अजीजुन निसा

नारी जीवन के विशेष पहलू की ओर प्रकाश डाला गया एक नाटक है यह। नारी जीवन की बिडंबना तथा उससे उभरे एक नये पक्ष को उद्‌घाटित करने में अजीजुन का चरित्र महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है। अजीजुन तथा शमसुद्धीन के प्रेम के ज़रिए देशप्रेम, त्याग तथा वीरता को नाटक में उत्कृष्ट ढंग से चित्रित किया है। अजीजुन ही नाटक के केन्द्र में है जो एक आदर्श औरत के रूप में हमारे मन हरती है। प्रस्तुत नाटक एक आदर्शप्रधान नाटक हैं।

1.6.15.7 बांझ की घाटी

भोपाल गैस दुर्घाटना की विभीषिकाओं का जीवंत प्रस्तुतीकरण है बांझ की घाटी। यूनियन कार्बैड में हुई गैस लीकेज की घटनायें इस नाटक का आधार है। प्रस्तुत नाटक का सृजन भोपाल की वास्तविक धरातल पर है। भोपाल की वास्तविक आधार पर दस आँखों देखी परिस्थितियों को सुगंठित कर इस नाटक का मंचन अत्यंत खूबी से किया गया है।

1.6.15.8 माँ का सपना

नागदा उज्जैन के पास का एक छोटा सा औद्योगिक नगर है। यहाँ रसायन और गैस से दूषित है चंपल का पानी। प्रांत की मिलों में काम करनेवाले मज़दूरों की ज़िन्दगी का दर्दनाक चित्रण इस नाटक में मिलता है। यहाँ की परिस्थिति इतनी दूषित है कि इस परिणाम यहाँ की मज़दूर और यहाँ के औरतों को भोगना पड़ता है।

"जेल, कचहरी, रासायनिक फैकटरियों की जगह से वक्त बीमारी और मौत यह वहाँ की संपदा है।"[39] यह एक समाज की दयनीय अवस्था का स्पष्ट चित्रिण है।

1.6.15.9 विक्रमादित्य का न्यायासन

प्रस्तुत नाटक 1979 में लिखित है। उज्जैन की लोककला के माँग पर यह लिखा गया है। निवेदिता नामक औरत की कहानी नाटक के केन्द्र में है।

1.6.15.10 एहसास

कालेज की छात्राओं और नौकरीपेशा महिलाओं को साथ लेकर तैयार किया गया नाटक है एहसास। कई स्थानों में यह नाटक प्रदर्शित गया है।

1.6.16 आशा वर्मा

हिन्दी की महिला नाट्यलेखिकाओं में महत्वपूर्ण है आशा वर्मा। उन्होंने सिर्फ एक नाटक लिखकर हिन्दी नाट्यविधा को संपन्न बनाने की कोशिश की। उनका एकमात्र नाटक है आत्महत्या की दूकान। यह एक प्रहसन के रूप में लिखित है।

1.6.16.1 आत्महत्या की दूकान

प्रस्तुत नाटक 1984 में लिखित है। स्वातंत्र्योत्तर भारतीय समाज की समस्याओं को प्रस्तुत नाटक में उभारा है। नवयुवकों का स्वप्नभंग, दहेज-समस्या, अल्पवेतन भोगी कर्मचारीयों की अतृप्ति भरी ज़िन्दगी जैसी नंगी समस्याओं का एक स्पष्ट बयान यह नाटक। अटपटे लाल की दूकान, कई समस्याओं से पीडित, आत्महत्या पर शारण पाने वालों के लिए एक सहारा बन जाता है। व्यक्ति अपनी समस्याओं व

---

[39] कुसुमकुमार का नाट्य साहित्य - दीपा कुचेकर, पृ.34

परिस्थितियों से जूझकर जीवन का अंत चाहते है। लेकिन ऐसे व्यक्तियों को अपनी परेशानियों से उभारने के लिए तथा जीवित रखने के लिए कोई तय करेगा तो, ये लोग आत्महत्या छौड दे और पुनः ज़िन्दगी से प्यार करने लगे यही इस नाटक का उद्देश्य तथा संदेश है। असामाजिक तत्वों पर घृणा भी नाटक का लक्ष्य रहा है।

1.6.17 अयेशा अहमद

अयेशा अहमद हिन्दी महिला लेखिकाओं में प्रमुख है जिसने सिर्फ दो नाटकों की रचना के द्वारा ही नाटक साहित्य को संपन्न किया है। 'दादी की चारपाई' उनका सबसे प्रमुख नाटक है।

1.6.17.1 दादी की चारपाई

इस नाटक में नवाब के पतन की कहानी को मर्मस्पर्शी ढंग से अभिव्यक्त किया है। नवाब साहब का आर्थिक संकट ही नाटक का केन्द्र बिन्दु है। खानदान का जुए और शराब की कोठियों में तवायफों की वजह से ही पतन हुआ। नवाब खानदान की ऐश और शान की अवस्था से लेकर उसके पतन तक को इस नाटक में दिखाया है। नाटक में दादी के देश के प्रति अपनापन की भावना, देश प्रेम आदि व्यक्तरूप में मिलता है। अंग्रेज़ी दवा खाना वह नहीं चाहती। परिवार के नवाबी ठाठ बाट से लेकर देशप्रेम, मातृभाषा के प्रति आग्रह अपनापन आदि नाटक में देशप्रेम को उजागर करते है। श्रीमती विनोद जैन के अनुसार-"लेखिका ने दादी की चारपाई के प्रतीक के माध्यम से राष्ट्रप्रेम, राष्ट्रभाषा प्रेम को समकालीनता के स्तर पर उभार कर सामाजिक-आर्थिक-सांस्कृतिक तथा राष्ट्रीय चेतना को सुन्दर और सजीव रूप में

उभारा है।"[40] इस प्रकार नाटक राष्ट्रप्रेम, स्त्री की ज़िन्दगी, चुनाव प्रक्रियाओं की विसंगतियों को उभारते है।

1.6.18 डॉ. गिरीश रस्तोगी

गिरीश रस्तोगी का जन्म उत्तर प्रदेश के बदायूँ में 1935 में हुआ। हिन्दी रंगजगत में निर्देशक, अभिनेत्री, नाट्यांतरकार, नाट्य प्रशिक्षक एवं नाटककार के रूप में वे प्रसिद्ध है। एम.ए, एम.एड, पि.एच.डी की उपाधि उनको प्राप्त है। रंगकर्म उनके जीवन का प्रमुख अंग है। मौलिक तथा अनूदित नाटकों का मंचीकरण इनमें प्रमुख है। काव्य तथा कहानी लेखन में भी वे प्रमुख है। 'ताज की पाया' उनका एक प्रमुख कविता संग्रह है। महादेवी पुरस्कार, नागरिक पुरस्कार आदि मूल्यवत पुरस्कारों से सम्मानित गिरीश रस्तोगी हिन्दी महिला नाटक में अनमोल धरोहर है। 1968 में 'रूपांतर नाट्यमंच' की स्थापना की। नाटक प्रशिक्षक एवं नाट्य समीक्षक के रूप में गिरीश रस्तोगी का योगदान व्यापक रहा है।

1.6.18.1 अपने हाथ बिकानी

नाटक में 'बिन्दु' नायिका है जिसके अछूते अनुभव को सच्चे ढंग से इससे प्रकट किया है। अपने पिता को अन्य पुरुषों के समान संवेदनशील समझनेवाली युवती की दोहरी मानसिकता का स्पष्ट एहसास नाटक देता है। पिता भी समाज की मानसिकता के साथ तादात्म्य पाता है -"समाज में रहता है तो समाज के नियम भी

---

[40] स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी महिला नाटककारों के नाटकों में सामाजिक चेतना - विनोद जैन, पृ.82

मानने है।"[41] ऐसे, एक दोहरी मानसिकता वाले समाज का विश्लेषण नाटक में मिलता है। नाटक नारी की अदम्य, स्वतंत्रता की इच्छा को व्यक्त करता है। स्त्री शिक्षा पर भी प्रस्तुत नाटक ज़ोर देता है।

1.6.18.2 असुरक्षित

इस नाटक में सामाजिक तथा मानसिक स्थितियों का मार्मिक चित्रण किया है।

1.6.19 डॉ. मधु धवन

दसवीं दशक की महत्वपूर्ण महिला लेखकों में सबसे प्रमुख है डॉ.मधु धवन। नाटक के अलावा उपन्यास, काव्य, खंडकाव्य, आलोचना और पत्रकारिता में अपनी बहुमुखी प्रतिभा दिखाई मधु जी पेशे से प्राध्यापक रही है। 'प्यार भरे दादाजी', 'करवट लेता वक्त', 'जुर्माना', 'आकांक्षा' आदि उनके प्रमुख उपन्यास है तथा 'स्वर्णिम भारत' प्रसिद्ध काव्य संग्रह है। समीक्षक के रूप में भी प्रसिद्ध मधु जी का आलोचनात्मक ग्रन्थ है नरेश मेहता की 'शबरी' और मैथिली शरण गुप्त का 'नहुष'। मधु जी के साहित्य प्रेम, श्रद्धा, विश्वास, करुणा सत्य, अहिंसा आदि मूल्यों पर ज़ोर देकर मानवीयता को साध्य बनाने की कोशिश रहा है। गांधीजी के विचार तत्व सर्वजन हिताय के लिए ज़रूरी मानकर ये तत्व समाज में ओर अधिक रूपायित करने का प्रयास हुआ है।

---

[41] अपने हाथ बिकानी - डॉ. गिरीश रस्तोगी, पृ.55

1.6.19.1 मैने कब चाहा?

बढती हुई पारिवारिक समस्याओं की ओर खुली दृष्टि है प्रस्तुत नाटक में। उच्चवर्ग समाज की थोथी मानसिकता अहंकार का दुषित परिणाम आदि पर ज्यादा ज़ोर देते है। आज की युवा पीढियों में बढते प्रेम विवाह, अनमेल विवाह आदि पर नाटक का ध्यान गया है। एक पत्नी की पहचान नाटक में बहुत मर्मस्पर्शी रह जाती है- "मैं आज जान गयी हुँ कि एक पति के बिना पल भर भी जिया नहीं जा सकता... मैने कब चाह...मैं परित्यक्ता होऊँ, पुत्र बेबाप का कहलाये...मुझे मेरा पति मिल जाये....वे जो कहेंगे मैं वही करूँगी।"[42] नाटक समकालीन स्थितियों को यथार्थ रूप से उभारता है। सामाजिक पहलुओं पर नाटक चर्चा करता है।

1.6.19.2 भूल

सिंधिया एक उच्च सरकारयुक्त संयुक्त परिवार है। ऐसे परिवारों के आदर्श नाटक में चित्रित है। सिंधिया परिवार की तीन बहुओं की कथा नाटक के केन्द्र में है। प्राचीन परंपराओं और मान्यताओं को सुरक्षित रखने का उपदेश भी नाटक देता है। श्रीमती विनोद जैन के अनुसार-"लेखिका ने नारी शिक्षा, संयुक्त परिवार, नारी अहं, एकाकी परिवार का आकर्षण, अपरिपक्व हाथों में उद्योग के परिणाम स्वरूप टूटने की ओर अग्रसर संयुक्त परिवार के माध्यम से समसामयिक संदर्भों को प्रस्तुत किया है।"[43] स्त्री शिक्षा की महत्ता परिवार के अस्तित्व के लिए कितना कुछ उपयोगी है-यह भी नाटक दिखाता है।

---

[42] मैने कब चाहा? - डॉ. मधु धवन, पृ.39

[43] स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी महिला नाटककारों के नाटकों में सामाजिक चेतना - विनोद जैन, पृ.100

1.6.19.3 त्रास

'त्रास' नाटक शौक्षिक क्षेत्रों में व्याप्त विसंगतियों का स्पष्ट रूप है। पब्लिक स्कूलों में जो व्यावसायिक मनोभाव उपस्थित है, उस पर नाटक चर्चा करता है। पैसों की बढती हुई मांगें, स्कूलों में जमा होता चंदा आदि बातें शिक्षा के व्यावसायीकरण के प्रमाण है। पाठ्यक्रम समित के बैठकों की व्यर्थ लक्ष्य पर भी नाटक व्यंग्य करता है। विनोद जैन के अनुसार "शिक्षा-जगत पर छाऐ त्रास का सुन्दर वर्णन किया है। नाटक की सामाजिक और आर्थिक चेतना इसी स्तर पर उभरती हुई दिखाई देती है।"[44] बच्चों को महंगें स्कूलों में दाखिल दिलाने की, माता-पिता का दिखावा आदि मनोवृत्ति पर नाटक व्यंग्य करता है। साथ ही शिक्षा-जगत की व्यावसायिक मनोवृत्ति का भी स्पष्ट एहसास नाटक देता है।

1.6.19.4 भारत कहाँ जा रहा है?

मानवीय मूल्यों का तथा नैतिक चेतना का ह्रास 'भारत कहाँ जा रहा है' नाटक का विषय है। तकनीकी प्रौद्योगिकी क्षेत्रों में बढावा देने वाली भारत की वर्तमान सामाजिक नियती के दयनीय दशा ही प्रस्तुत नाटक में चित्रित है। युवा पीढ़ी अपनी आदर्शहीनता से ऊब चुकी है। तभी गांधीवादी विचारधाराओं की प्रधानता सामने उभरती है। डॉ. भगवान जाधव के अनुसार "गांधीजी जी के भावनाओं में निहित स्वर को पहचानकर उसे जीवन में उतारने की बात कही है जिसकी आज अत्यंत आवश्यकता है। अतः नाटककार ने भारत की अर्थिक,

---

[44] स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी महिला नाटककारों के नाटकों में सामाजिक चेतना - विनोद जैन, पृ.101

सामाजिक और नैतिक स्थिति के हो रहे पतन को प्रतिपादित किया है।"[45] गांधीजी के विचारों को वार्तालाप और दृश्यों के माध्यम से प्रस्तुत किया है।

1.6.20 उषा गांगुली

उषा गांगुली का जन्म 1945 अगस्त 20 को राजस्थान में हुआ। बिकानेर से पढाई पूर्ती करने के बाद कोलकत्ता में वे कार्यरत थी। उन्हें सुप्रसिद्ध निर्देशिका अभिनेत्री, नाटककार, नाट्य रूपांतरकार और अनुवादक के रूप में ख्याति प्राप्त है। उन्होंने अपने कर्म की शुरूआत अभिनय से ही की है। अनेक नाटकों में प्रमुख भूमिकाओं में अपनी क्षमता को प्रदर्शित उषा गांगुली ने 'अन्तर्यात्रा' में एकल अभिनय द्वारा स्त्री के संघर्ष को साकार किया है। 1994 में 'खोज' नामक नाटक के साथ मौलिक नाट्य लेखन शुरू किया। कर्मठ, अनुशासन प्रिय रंग व्यक्तित्व के रूप में उषा गांगुली हिन्दी नाट्य जगत में प्रस्तुत है। तीन मौलिक नाटक उनके द्वारा रचित है- 'खोज', 'अंतर्यात्रा' और 'भोर'- जो आजतक प्रकाशित नहीं है।

1.6.21 मीरा कांत

मीरा कांत का जन्म 1958 में श्रीनगर में हुआ। मीरा कांत ने एम.ए.की शिक्षा दिल्ली विश्वविद्यालय से और पी.एच.डी जामिया मिलिया इस्लामिया से प्राप्त की। बहुमुखी प्रतिभा से धनी मीरा कांत कविता, कहानी-निबंध, उपन्यास, नाटक जैसे अनेक विधाओं में अपनी लेखनी चलाई है। इनके साहित्य में संघर्षशील औरत और हाशिएकृत व्यक्ति प्रमुख है। 'तुम क्या निर्वस्त्र करोगे मुझे?', 'घर से धूल कब साफ होगी?' दोनों उनकी लंबी कवितायें है। 'हाइफन', 'कागज़ी बुर्ज', 'गली

---

[45] हिन्दी महिला नाटककार - भगवान जाधव, पृ.111

दुल्हनवाली' आदि कहानी संग्रह तथा 'तत किम', 'उर्फ हिटलर', 'एक कोई था कहीं नहीं सा' उपन्यास है। बाल साहित्य, अनुवाद-यात्रा वर्णन, नाट्य रूपांतर, नुक्कड नाटक और शोधकार्य में भी मीरा कांत का योगदान कम महत्वपूर्ण नहीं है। उनके नाटकों में उपेक्षित और पीडित नारी तथा मानसिक और शारीरिक रूप से पिछडे हुए भाग्यहीन व्यक्तियों की व्यथा प्रस्तुत हुई है। उन्हें 2005-2006 से हिन्दी अकादमी दिल्ली के साहित्यकार सम्मान से विभूषित किया।

1.6.21.1 ईहामृग

ईहामृग नाटक रागात्मक संबंधों पर केन्द्रित है। नाटककार ने रागात्मक संबंधों के ज़रिए विचार-बिंदुओं के संयोग पर बल दिया है। ज़िन्दगी में पंचतत्वों के संतुलन की महत्ता अति श्रेष्ठ है यही नाटक का प्रमुख कथ्य है। सत्य और मिथ्या के बीच नारी मन व्यथित है। संपूर्णता की तलाश में भटकने वाली नारी हमेशा द्वन्द में जूझती रही है। मानव संबंधों की गहराइयों में डुबकियाँ लगानेवाला यह नाटक अत्यंत चर्चित है।

1.6.21.2 नेपथ्यराग

महिलाओं की पहचान का संघर्ष है प्रस्तुत नाटक। समाज रूपी रंगमंच में प्रमुख पात्र बनने के लिए संघर्षरत एक नारी की कथा है इस नाटक में। विदुषी स्त्री किसी भी देशकाल में समाज द्वारा स्वीकृत नहीं। आधुनिक और प्राचीन प्रसंगों से नाटक गुज़रकर दोनों ज़माने की कथा कहता है। वास्तव में नेपथ्यराग महिलाओं के संघर्ष को आवाज़ देती है। प्रस्तुत कथा इसका उदाहरण है कि-"उनका कहना है कि यदि स्त्री सभासद बने तो पहले उसकी जीभ काट ली जायें।"[46] औरत आज के इस

---

[46] नेपथ्यराग - मीरा कांत, पृ.61

युग में भी नेपथ्य में अपनी सारी मज़बूरियों के साथ उसी ढंग से, उसी दर्द में बन्द है जिनको मंच पर उपस्थित होने का मौका अब तक मिला ही नहीं।

1.6.21.3 भुवनेश्वर दर भुवनेश्वर

आधुनिक हिन्दी एकांकी के जनक भुवनेश्वर जी के व्यक्तित्व और कृतित्व पर आधारित है। यह नाटक उनके जीवन का ब्यौरा नहीं है बल्कि उसके जैसे असामान्य प्रतिभा को तत्कालीन वरेण्य हस्तियों द्वारा मिली प्रताडना को उद्घाटित करना है इस नाटक का लक्ष्य। प्रतिभाशाली असाधारण व्यक्तियों की पीडा, प्रताडना, भुवनेश्वर परंपरा को प्रकाश में लाने का प्रयास ज़रूर इस नाटक में हुआ है। भुवनेश्वर जी के जीवन को वश में करने के बदले उन्होंने नाटकों के संवाद को चुनकर उनके द्वारा ऐसी अवस्था का बयान किया है। भुवनेश्वर नाटक में कुछ बडे सवालों पर खुलकर बहस करने का सुप्रयास किया है।

1.6.21.4 कन्धे पर बैठा था शाप

भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा 'कंधे पर बैठा था शाप', 'मेघ प्रश्न' तथा 'कालीबर्फ' नाटकें प्रकाशित है। कालिदास की मृत्यु के कथानक को लेकर यह नाटक लिखित है। गणिका वृत्ति करनेवाली स्त्रीयों की मनोदशा का चित्रण, नाटक में कामिनी के माध्यम से किया है और इस व्यवस्था के भीतर झांककर उसकी समस्या को समझने की कोशिश भी इस नाटक में हुई है। स्वयं नाटककार के अनुसार-"कालिदास की विद्योत्तमा हो अथवा महात्मा गांधी की जीवन संगिनी हो, उन्हें गुरू अथवा देहविहीन श्रद्धेय अर्कीटाईप बनाने का पुरुष का एक पक्षीय फैसला

समानता के मूल्यों का अपहास है।"[47] स्त्री को देहविहीन श्रध्देय देखने का पुरुष का दृष्टिकोण समानता के मूल्यों का उपहास माना है।

1.6.21.5 मेघप्रश्न

'मेघप्रश्न' में नाटककार ने कालिदास रचित मेघदूतम, के कथा तत्व के अंतिम सिरे को एक नया रूप देने की कोशिश की है। यहा-यक्षिणी की विरह-व्यथा की अभव्यक्ति जिस मेघ से होती है उसी पर नाटक आधारित है। मेघदूतम में अंत तक मौन धारण करनेवाले पात्र इस नाटक में अपना मौन तोडते है। मेघ की व्यथा को स्वर देने के प्रयास के साथ-साथ जीवन के परम लक्ष्य की ओर भी नाटक दृष्टि फेरता है। भौतिक तृप्ति को परम लक्ष्य माननेवाले एक ज़माने को चेतावनी देता है प्रस्तुत नाटक।

1.6.21.6 कालीबर्फ

आतंकवाद और उसकी विसंगतियों पर प्रकाश डालता है 'कालीबर्फ' नाटक। कश्मीर का आतंकवाद और उसके परिणामों को नाटक प्रस्तुत करता है। विस्थापितों की करुणा भरी आवाज़ इस नाटक में गूँजती है। श्रीनगर के लोग आतंकवाद के कारण दिल्ली में विस्थापित है फिर भी वे अपनी धरती को भूला नहीं पाए। अपने घर, जायदाद, रिश्ते नातों आदि को खो देने का दर्द उनके दिल में हमेशा रहता है। मन में लगी यह खरोंच इन्सान को लहु-लूहान करती रहती है। "नाटक में कश्मीर

---

[47] कंधे पर बैठा था शाप - मीरा कांत, पृ.17

के हालात को मानवता वादी दृष्टिकोण से देखने समझने का प्रयास किया गया है।"[48] नाटक का शीर्षक 'कालीबर्फ' आतंकवाद के संदर्भ में सार्थक निकलता है।

1.6.21.7 अंत ज़ाहिर हो

2007 में लिखित नाटक है 'अंत ज़ाहिर हो'। समाज में बढती हुई अमानवीयता, व्यक्ति संबंधों में कितना बुरा असर डालती है यही नाटक का कथ्य है। घरवालों द्वारा किये जानेवाले अमानवीय व्यवहार, विश्वासघात की ओर खींचता है। औरत अपने रक्षक पर भी विश्वास न रख सकनेवाले इस दुनिया में, वह किस पर भरोसा रखेगी? ऐसी समस्याओं पर चिंता करने के लिए नाटक प्रेरित करता है।

1.6.21.8 हुमायूँ को उड जाने दो

प्रस्तुत नाटक 2008 का है। हुमायूँ की मृत्यु पर आधारित है यह नाटक। मृत्यु के बाद 17 दिनों तक हुमायूँ को दिखाये जाने की बातों से उसके जीवन कथा को संक्षिप्त रूप अनुमान कर सकते है। नाटक के अंत तक हुमायूँ की मौत के राज को खुलने नहीं देता। मीरा कान्त ने इस नाटक में इतिहास एवं कल्पना सत्य एवं मिथ्या को पिरोया है। भगवान जाधव के अनुसार, नाटक में "हुमायूँ की वदकिस्मती को उजागर कर उनकी छटपटाती आत्मा की मुक्ति का आह्वान नाटककार ने किया है। नाटक अभागे भाग्यवान बादशाह के जीवन की गुत्थियों को पेश कर मौत को ज़िन्दगी की शक्ल देने के इस सियासी खेल दर्द की सशक्त अभिव्यक्ति करता है।"[49] हुमायूँ का प्रस्तुतीकरण नाटक में प्रभावशाली ढ़ग से हुआ है।

---

[48] कंधे पर बैठा था शाप, काली बर्फ भूमिका से - मीरा कांत

[49] हिन्दी महिला नाटककार - भगवान जाधव, पृ.128

1.6.22 विभा रानी

1959 में बिहार के मधुबनी में विभा रानी का जन्म हुआ था। वे नाटककार के साथ-साथ कहानीकार, कवयित्री, उपन्यासकार आदि रूप में भी प्रशस्त है। हिन्दी में एम.ए और बि.एड की उपाधी प्राप्त विभा रानी, अब इंडियन ऑयल कार्परेशन लि. के विपणन विभाग में प्रबंधक के रूप में कार्यरत है। सामाजिक संस्था अंवितों को से संबंधित रहकर सामाजिक कार्यों में सक्रिय है। उनका रचना संसार विस्तृत है। 'बंद कमरे का कोरस', 'चल खुसरो घर आपने' आदि उनके कहानी-संग्रह है। अभिनेत्री, अनुवादक रूप में भी वे सुप्रसिद्ध है। 'दुलारीबाई', 'पोस्टर' तथा 'मि.जन्ना' आदि नाटकों में अभिनय भी किया है। हिन्दी धारावाहिकों और फिल्मों में उनका अभिनय भी हुआ है। उनको कथा अवार्डे, घनश्यामदास सरार्फ साहित्य सम्मान, मोहन राकेश सम्मान आदि सम्मानित किया है। उनके कुछ नाटक की सामग्री अब तक अनुपलब्ध है। अभिनय, लेखन तथा अनुवाद कार्य में वह एक दम प्रवीण है।

1.6.22.1 आओ तनिक प्रेम करें

पति पत्नि के बीच में प्रेम के अभाव के कारण उत्पन्न रूखापन को चित्रित किया है, इस नाटक चित्रित किया है। अपने जिम्मेदारी की पूर्तीकरण में ज़िन्दगी खोनेवाले व्यक्तियों द्वारा प्रेम, शांती की तलाश ही इस नाटक में प्रमुख है। साथ ही पुरुषप्रधान समाज की मानसिकता पर भी नाटक ज़ोर देता है। नाटक में स्त्री का कहना है-"हम दफ्तर में लेट बैठें तो दसवीं सवाल ऐसा कौन सा काम करती हो तुम

लोगों की देर तक बैठना पडता है। यानि तुम्हारा काम और हमारा काम शक।"[50] स्त्री ही पुरुषों की जननी है फिर भी उसका अस्तित्व अनदेखा किया जाता है।

1.6.22.2 अगले जन्म मोहे बिटिया न कीजो

लोककथा तथा सत्य कथा का मिश्रित रूप प्रस्तुत नाटक में मिलता है। मिथिला के वातावरण से यह नाटक संबद्ध है। समाज में स्त्रियाँ पुराने ज़माने से ही पराधीन स्थिति का अनुभव करती आयी है। वे अपने परिवारवालों से पहचानवालों से, सबसे शोषित की जाती रही है। नाटक व्यक्ति की मानसिक खोखलेपन को उभारने के साथ-साथ नारी की अस्मिता को ऊँचा करने की कोशिश भी करता है।

उपसंहार

निष्कर्षत: प्रस्तुत अध्याय में हिन्दी महिला नाट्य लेखिकाओं के व्यक्तित्व और कृतित्व का उल्लेखन करके उनसे हिन्दी नाट्य साहित्य को मिले योगदान को उजागर करने का प्रयास किया गया है। उनके नाटक हिन्दी नाट्य साहित्य में विशेष महत्व रखते है। केवल अभिभूत नारी समस्याओं पर ज़ोर न देकर, समाज के विस्तृत परिवेश से सारी समस्याओं को अपने नाटकों के द्वारा चित्रित करने का प्रयास किया है। इनके नाटकों में राजनीतिक, सामाजिक, पारिवारिक, आर्थिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, राष्ट्रीय जैसी समस्याओं के सच्चे चित्रण है। सामाजिक नाटककारों में श्रीमती लाली देवी, ताराप्रसाद वर्मा, विमला रैना, डॉ. मधु धवन आदि के नाटक यथार्थता को लिये हुए है। भारतीय परिवार और जीवन की ज्वलंत समस्यायें प्रस्तुत करने में कंचनलता सब्बरवाल, शांती महरोत्रा, त्रिपुरारी शर्मा, डॉ. मधु धवन आदि

---

[50] आओ तनिक प्रेम करें - विभा रानी, पृ.29

प्रमुख रही है। आर्थिक समस्याओं को अपने नाटकों में खींचने में भी महिला नाटककार सक्षम रही है। मृदुला गर्ग, आयेशा अहमद आदि के नाटक ज्वलंत आर्थिक समस्याओं का सच्चा बयान हमको देते है। इनके नाटक धार्मिक, सांस्कृतिक रहे है साथ ही साथ राष्ट्रीयता और देशप्रेम की भावना को भी उजागर करते है। नारी समस्याओं को उभारने में ये ज्यादा तत्पर दीख पडती है। शायद नारी होने के कारण ही, ऐसी समस्याओं का संवेदनगत दृष्टिकोण वे अपनाती है। आज नारी की ज़िन्दगी समस्याओं से भरी हुई है और इनसे नारी की मुक्ति उतनी आसान भी नहीं है। इस अवसर पर नारी समस्याओं की ओर अनदेखा करके वे रह नहीं सकती। लाली देवी, मृणाल पांडे, सरोज बिसारिया, मीराकांत आदि के कुछ नाटक नारी की अंतर्वेदना तथा पीडा को सशक्त रूप से उभारते है। सशक्त नारी पात्रों को जन्म देकर नारी अस्मिता का एक अलग पहलू के सृजन में उन्होंने दक्षता प्राप्त की है। उनके नाटक अनछुए विषयों को भी नाटकों में उभारकर अपनी विषयगत-विविधता को प्रदर्शित करती है। इस कडी में आनेवाली दो प्रमुख महिला नाटककार है श्रीमती कुसुमकुमार और नादिरा ज़हीर बब्बर। आनेवाले अध्यायों में उनकी रचनाओं का विशद विवेचन होने को है। सारी महिला नाटककार अपने परिवेश के प्रति सजग थीं, इसी का स्पष्ट उदाहरण उनके नाटकों में मिलता है। इस प्रकार हिन्दी महिला नाट्यलेखन अपनी विषय-गरिमा के कारण तथा अपनी वैयक्तिक सृजन क्षमता के कारण भी हिन्दी नाटक-साहित्य में अमिट छाप छोडने में सफल रही है, जो संपूर्ण साहित्य में ही नहीं सारी महिलाओं के लिए भी गर्व की बात है।